अध्याय–षष्ठ

नासिरा शर्मा का हिन्दी साहित्य में प्रदेय एवं साक्षात्कार

अध्याय–6

नासिरा शर्मा का हिन्दी साहित्य में प्रदेय एवं साक्षात्कार

नासिरा शर्मा एक श्रेष्ठ साहित्यकार हैं। उनका साहित्य हिन्दी साहित्य की अक्षय निधि है। उनके साहित्य में समाज का वास्तविक रूप दिखायी पड़ता है। समाज के विभिन्न वर्गों का चित्रण बखूबी किया गया है। यदि देखा जाए तो नारी की स्थिति बड़े ही मार्मिक ढंग से व्यक्त किया है। नारी चित्रण में उनकी तुलना किसी से नहीं की जा सकती है। नारी की स्थिति को दयनीय बनाने वाले उन सभी कारणों को उन्होंने बड़ी ही निडरता से प्रस्तुत किया है। कहानी और उपन्यास में वर्णित नारी समस्याएँ संवेदनशील पाठक को झकझोर कर रख देती है। नासिरा शर्मा का लेखन क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है। भारत के अतिरिक्त अन्य देशों फिलस्तीन, ईरान, इराक, तुर्की, सीरिया, इथोपिया, बंगालदेश जैसे देश भी इनकी लेखनी की परिधि में आते है। इनकी लेखनी का एक मात्र उद्‌देश्य विश्व के मानव की पीड़ा और संवेदनाओं का निष्पक्ष विवेचन कर शान्ति और मित्रता का सन्देश देना है। उनकी कहानियों का भूगोल किसी शहर, प्रान्त और देशों की सरहदों में कैद नहीं है, बल्कि उनके पास, आर–पार और दूर–दूर तक देखने वाली दृष्टि है और यह दृष्टि सही मायनों में मानवीय है, भाई–चारे का पैगाम देने वाली है, 'विश्व मानवता' का इतिहास रचने वाली है। उनके अनुसार सबसे बड़ा धर्म इन्सानियत का है। भाषा, प्रान्त, धर्म, देश, सरहद यह सब तो मानव की कुण्ठाएँ हैं, एक–दूसरे को काटने का हथियार हैं। भाषा के स्तर पर जब लोककथाओं के कदम आगे बढ़े तो उपन्यास और कहानी दिखाई देने लगी और आधुनिक रूप में स्थापित होने के साथ ही भौगोलिक सीमाओं को तोड़कर चारों ओर अपने छींटे बिखरेती नजर आने लगी। अपने तलुवों में धरती को छूती हुई कहानी, खेत–खलयानों से गुजरती जागीदारों के शोषण, साहूकारों के अत्याचार, मज़दूरों के आंसुओं का अहसास दिलाती, गाँव–नगर, महानगरों में विचरण करती हुई, परम्परागत आंगन में टीस, कसक, कुण्ठा–शोषण आदि के धरातल पर सुख–दुख के हमसफर किरदारों को जीवंतता प्रदान करने लगी। आधुनिकता बोध नासिरा शर्मा के कथा साहित्य में पूरी तरह

समाया हैं नासिरा शर्मा के कथा साहित्य में मध्यम वर्ग की उस नारी की कहानियाँ हैं जो नारी त्रासदी एवं मनोवृत्तियों एवं मानसिकताओं के बीच से उभरती है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त देश की स्थिति के साथ–साथ नारी की स्थिति में भी सुधार आने लगा। उसने भी अपने व्यक्तित्व के विकास का प्रयत्न किया और वह साहित्य के अतिरिक्त समाज के अन्य विविध कार्य क्षेत्रों में भी कार्यरत होने लगे। स्वातन्त्रोत्तर कथा लेखिकाओं में महत्वपूर्ण नाम ऊषा प्रियंवदा, मन्नू भण्डारी, रजनी परिकर, शिवानी, कृष्णा सोबती, ममता कालिया, शशि प्रभा शास्त्री, कृष्णा अग्निहोत्री, दीप्ति खण्डेलवाल, सूर्य बाला, मालती जोशी, मृदला गर्ग, मृणाल पाण्डे, चित्रा मुदगल, राजी सेठ, आदि में नासिरा शर्मा का नाम सर्वोपरि है।

महिला कथाकारों में नासिरा शर्मा एक सशक्त हस्ताक्षर हैं जिनकी दृष्टि में परिपक्वता और लेखन में व्यापकता है। दैनिक जीवन की घटनाओं, घर–परिवार की विडम्बनाओं और नारी जीवन की पीड़ा के साथ–साथ अपने समय में व्याप्त विसंगतियों और कुरूपताओं को रचनाकार ने यथार्थता के साथ आंका और किसी विषेष क्षेत्र में बंधकर नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व को केन्द्र में रखकर अभिव्यक्ति प्रदान की।

उपन्यासकार के रूप में नासिरा शर्मा ने हिन्दी साहित्य जगत् को कई कहानियां एवं उपन्यास दिये हैं। वर्ष 1984 में 'सात नदियां एक समंदर' से प्रारम्भ उनकी औपन्यासिक यात्रा अनवरत विकास करती तथा विविध विषयों को समेटती हुई सन् 2014 में 'कागज की नाव' तक विस्तृत है। रचनाकार के शब्दों में –"एक के बाद एक तीन उपन्यास इलाहाबाद के परिवेश पर आये वरना पिछले चार उपन्यासों का परिवेश तो ईरान, पैरिस, दिल्ली, दुबई, यू० पी० का कस्बा–बस्ती और फैजाबाद लाहौर रहा। ....मेरी रचनाएँ हिन्दुस्तान के बाहर विभिन्न देशों व शहरों पर लिखी गई।"[471]

नासिरा शर्मा के प्रथम उपन्यास 'सात नदियां एक समंदर' की कथावस्तु का ताना–बाना ईरानी क्रांति से संपृक्त, सात सहेलियों के जीवन की उठापटक के साथ–साथ एक साम्राज्य के अंत व दूसरे के प्रारंभ से उपजे द्वंद्व की कथा को

---

[471] रवींद्र कालिया (संपादक)–नया ज्ञानोदय, (नासिरा शर्मा से जाबिर हुसैन की बातचीत), अंक–जून 2007, पृ० 62

प्रस्तुत करता है। ' इन्कलाब–ए–सफेद' के नाम से चर्चित यह क्रांति ईरान में पश्चिमीकरण के बढ़ते सैलाब पर बाँध बाँधने के लिए प्रभाव में आई थी ''जिसका मूक संदेश धार्मिक एकता और मॉडर्नाइजेशन के विरूद्ध प्रतिरोध था।''[472] आंदोलन के परिणामस्वरुप अंततः सत्ता परिवर्तित हुई और लोगों का धार्मिक नेता अय्यातुल्ला खुमैनी शासनारूढ़ हो गया। अब धर्म सर्वशक्तिमान हो गया था और जिस धर्म की रक्षा हेतु यह क्रांति वजूद में आयी थी वही धर्म अब निरंकुश तानाशाह में परिवर्तित हो चुका था। उपन्यास में आई सात सहेलियों (महनाज, सूसन, परी, मलीहा, तय्यबा, अख्तर, सनोबर) में तय्यबा एक ऐसी सशक्त पात्रा है जो एक स्वतंत्र व्यक्तित्व की स्वामिनी है। वह पेशे से पत्रकार है तथा कलम के सहारे जनसामान्य में चेतना उत्पन्न करती है कि ''मौलवियों का हमारे प्रति झुकाव सिर्फ एक चाल है, वह भी हमें जानने की, पहचानने की, हमें फँसाने की इसलिए मौलवियों के हाथों में नकेल थमाना उचित नहीं क्योंकि धर्म और कम्यूनिज्म तर्क के स्तर पर कभी एक म्यान में नहीं रखे जा सकते और न ही एक साथ चल सकते हैं।''[473] इतिहास साक्षी है कि सत्ता के विरोधियों को कारावास में यातनाएँ झेलनी पड़ती हैं। तय्यबा इसी शोषण का शिकार हुई किंतु न पथ विचलित हुई और न ही पीछे हटी अपितु अंतिम साँस तक परिस्थितियों से संघर्ष करती रही। ईरान की कारावासों में तय्यबा व अन्य महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों के माध्यम से रचनाकार ने संपूर्ण विश्व में स्त्रियों की स्थिति पर प्रकाश डाला है। अंततः अत्यंत निर्भीकता से समाज से यह पूछती हैं कि ''समाज के हर बदलाव की मार औरत की पीठ पर ही क्यों पड़ती है?''[474]

भारतीय परिवेश पर आधारित 'शाल्मली'(1987) और 'ठीकरे की मंगनी'(1989) में दो विभिन्न समाजों में नारी के संघर्ष को लिपिबद्ध किया गया है। शाल्मली भारतीय परिवेश के हिन्दू समाज में दाम्पत्य संबंधों में आए तनाव के साथ साथ स्त्री अस्तित्व पर प्रश्नचिह्न लगाया गया है कि ''स्त्री आखिर है क्या ? युगों–युगों से पीढ़ी–दर–पीढ़ी चली आ रही मान्यताएं तथा संस्कार औरत को गीली मिट्टी से अधिक संज्ञा नहीं देते। पहले पिता की छत्रछाया में उनके अनुरूप वह ढलती है,

---

472 नासिरा शर्मा–सात नदियां एक समंदर, नई दिल्लीः सामयिक प्रकाशन, पृ० 54

473 नासिरा शर्मा–सात नदियां एक समंदर, नई दिल्लीः सामयिक प्रकाशन, पृ० 289

474 नासिरा शर्मा–सात नदियां एक समंदर, नई दिल्लीः सामयिक प्रकाशन, पृ० 289

बाद में पति उसे अपनी इच्छानुसार ढालता है और उसके बाद पुत्र, स्त्री का अपना कोई अस्तित्व है ही नहीं।''[475] ऐसी ही स्थिति शाल्मली की है जो कार्यक्षेत्र में तो सम्मान की अधिकारिणी बन चुकी है लेकिन घर में विशेषकर पति (नरेश) की दृष्टि में उसका कोई अस्तित्व नहीं है। वह उसे मात्र भोग्या समझ निरंतर उसका तिरस्कार करता है। शाल्मली, नरेश के दुर्व्यवहार से कुंठित होती किंतु उसे क्षमा भी करती है। शाल्मली आधुनिक और स्वावलम्बी होते हुए भारतीय नारी के संस्कार, विवाह संस्था के प्रति निष्ठा तथा पति के प्रति अगाध प्रेम व सत्कार भावना समाहित हैं इसीलिए शाल्मली का ''विश्वास न घर छोड़ने पर है, न तोड़ने पर, न आत्महत्या पर है, न अपने को किसी एक के लिए स्वाहा करने पर। मैं तो घर के साथ–साथ औरत के अधिकार की कल्पना भी करती हूँ और विश्वास भी। अधिकार पाना यानी 'घर निकाला' नहीं और घर बनाए रखने का अर्थ ' सम्मान' को कुचल फेंकना नहीं है।''[476] इसी सकारात्मक प्रवृत्ति के कारण वह न तो तलाक लेती और न ही पुनर्विवाह करती है क्योंकि "इतना बड़ा संसार तो यही, जब उसमें खुशियाँ प्राप्त न हो सकीं, तो द्वार–द्वार भटकने से भीख मिलेगी, प्रेम और आदर नहीं।''[477]

मुस्लिम परिदृश्य पर आधृत 'ठीकरे की मंगनी' उपन्यास शाल्मली का ही विस्तार है जो स्वतंत्र अस्तित्व हेतु संघर्षरत स्त्री की दास्तान से सम्बद्ध है। शिक्षा ने नारी को एक नवीन पथ प्रदान किया जिससे वह आत्मनिर्भर होकर नारी शोषण व जड़ रूढ़ियों का विरोध करने में सक्षम हो पाई जिसका सटीक उदाहरण है उपन्यास की नायिका महरुख। इसीलिए नारी शोषण के विरूद्ध प्रश्न उठाती हुई कहती है– '' सही गलत की कसौटी औरत होती है, मजहब और रीति–रिवाजों की जिम्मेदारी भी औरत होती है, राजनीतिक बदलाव को दर्शाने वाली भी औरत होती है। कुल मिलाकर इस दुनिया को जिंदा रखने वाली भी औरत होती है।''[478] तो ''फिर औरत को इतनी हिकारत की नजर से क्यों देखा जाता है?''[479] परिस्थितियों

---

[475] नासिरा शर्मा–शाल्मली, नई दिल्लीः किताबघर प्रकाशन, सन् 1987, पृ० 75.

[476] नासिरा शर्मा–शाल्मली, नई दिल्लीः किताबघर प्रकाशन, सन् 1987, पृ० 164

[477] नासिरा शर्मा–शाल्मली, नई दिल्लीः किताबघर प्रकाशन, सन् 1987, पृ० 161

[478] नासिरा शर्मा–ठीकरे की मंगनी, नई दिल्लीः किताबघर प्रकाशन, सन् 1989, पृ० 178

[479] नासिरा शर्मा–ठीकरे की मंगनी, नई दिल्लीः किताबघर प्रकाशन, सन् 1989, पृ० 178

की समझ महरुख को सुदृढ़ता प्रदान करती है और मंगेतर रफत के पर– स्त्री से संबंधों का भान होते ही उसके प्रति अनासक्त हो विवाह का प्रस्ताव ठुकराती है। लेकिन वह पुरूष विरोधी नहीं है अपितु वह मानती है कि ''मर्द न हमारा दुश्मन है न हरीफ। वह हमारी तरह इन्सान है।''[480] लेकिन पुरूष का नारी के प्रति परिवर्तित व्यवहार का सबसे बड़ा कारण ''आज की बदलती औरत है जिसे वह समझ नहीं पा रहा है''[481] को मानती है। इसके द्वारा रचनाकार की साकारात्मक दृष्टि उजागर होती है कि न तो हमें (स्त्रियों) पुरूष बनना है और न ही पुरूषों को स्त्रियां। अपितु अपने–अपने कर्तव्यों का भलीभांति निर्वाह करना है। यही सब समझाकर महरुख रफत की कुंठाओं का निवारण करती हुई अन्यत्र विवाह हेतु परामर्श देती है। केवल इतना ही नहीं अपितु वह भारतीय परम्परागत समाज में व्याप्त रूढ़ियों विशेषकर 'स्त्री की एकमात्र धुरी पुरूष है', 'नारी पुरूष पर अवलम्बित है', 'नारी अस्तित्व पुरूष के कारण है', की भी विरोधिनी है। वह स्वयं को किसी पर आश्रित न मानते हुए अपने स्वतंत्र अस्तित्व की घोषणा करते हुए कहती है–''एक घर औरत का अपना भी तो हो सकता है उसके बाप या पति से अलग, उसकी मेहनत और पहचान का।''[482] महरुख का रफत के प्रति प्रेम व समर्पण उदारीकृत होकर समाज के प्रति प्रेम व समर्पण में परिवर्तित हो जाता है। सामाजिक समस्याओं की जटिलता और उन्हें सुलझाने की कर्मठता में प्रेम की असफलता और मंगेतर रफत के आचरण से उत्पन्न हुई खीझ पूर्णतः विगलित हो जाती है तथा वह कुंठाविहीन नारी के रूप में पाठकों के समझ आती है।

राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय परिदृष्य में मुसलमानों की स्थिति को केंद्र में रखकर लिखा गया उपन्यास 'जिंदा मुहावरे'(1994) में ''विभाजन की पीड़ा, दंगे, असुरक्षा, महाजिर की विडम्बना, सम्बन्धों में समाई प्रतीक्षा, यादों के तहखाने, स्वार्थी राजनीतिक अस्मिता का संघर्ष, धर्म, शिक्षा, संस्कृति, अर्थ''[483] जैसे ज्वलन्त प्रश्न

---

[480] नासिरा शर्मा–ठीकरे की मंगनी, नई दिल्लीः किताबघर प्रकाशन, सन् 1989, पृ० 179

[481] नासिरा शर्मा–ठीकरे की मंगनी, नई दिल्लीः किताबघर प्रकाशन, सन् 1989, पृ० 179

[482] नासिरा शर्मा–ठीकरे की मंगनी, नई दिल्लीः किताबघर प्रकाशन, सन् 1989, पृ० 197

[483] मधु संधु–' महिला उपन्यासकार 21वीं सदी की पूर्व संध्या के संदर्भ , दिल्लीः निर्मल पब्लिकेशन्स, सन् 2000 पृ० 17

उठाए गए हैं। विभाजन एक ऐसी त्रासदी थी जिसने हँसते–खेलते परिवारों को बाँटकर रख दिया और ये परिवार आज भी विभाजन के दर्द को झेल रहे हैं। रहीमुद्दीन का परिवार ऐसे ही परिवार का प्रतिनिधित्व करता है जिसका बड़ा पुत्र इमाम तो उनके पास है किंतु छोटा बेटा निजाम बंटवारे के समय पाकिस्तान को अपना देश मान कराची में जा बसता है। समयोपरांत प्रतिष्ठित व्यापारी बनने पर भी सम्मान न मिला और 'मुहाजिर' की संज्ञा पा उसका अंतर्मन व्यथित है। भारत में सम्बन्धियों से मिलने पर सत्य उसके समक्ष आया कि ''रिश्ते तो टूट चुके हैं, मियां... ..रिश्तों को अब कोई नहीं पहचानता। एक चने की दाल दो दरख्तों में बदल चुके हैं, हमारा माहौल, हमारी सोच, हमारी चुनौतियां सब एक–दूसरे से जुदा हैं।''[484] इस प्रकार निजाम निरंतर मानसिक शांति का अनुभव करता है। विवेच्य रचना में नासिरा ने मुस्लिम समाज की दयनीय दशा के निरूपण के साथ–साथ भारतीय समाज में उनके बढ़ रहे सम्मान को गोलू के माध्यम से यह कहते हुए दर्शाया है कि ''एक मुसलमान अफसर के नीचे हजारों मातहत हिंदू भी हो सकते हैं और .... दंगे–फसाद.....असलियत वह नहीं, जो बताई जाती है, बल्कि सच्चाई वह है, जो नजर आ रही है।''[485] इन सभी तथ्यों से अवगत हो निजाम निरंतर पश्चाताप की अग्नि में जलता रहता है और अपनी विवशता पर केवल आँसू बहाने का मजबूर है। यह केवल विभाजन और उसके पश्चात् की समस्या नहीं है अपितु इतिहास में हुए अमानवीय अत्याचार के परिणामस्वरूप समसामयिक परिवेश में भी मनुष्य जाति, धर्म, सम्प्रदाय आदि के नाम पर टुकड़ों में बंटा है और उसकी सोच इन्हीं दायरों में सिमटकर रह गई है। इसी सोच से उबारने के लिए नासिरा आने वाली पीढ़ियों को संदेश देती है कि ''विश्वास है कि वे मानवीय पीड़ा और पहले अनुभवों से सबक लेंगीं और ऐसी राजनीति से हाथ खींचेंगी जो अभिशाप बन दिलों को काटती, जमीन को बाँटती, घरों को उजाड़ती, बारूद के ढेर पर बैठे इन्सान को रूहानी तौर पर लगातार कमजोर बनाती जा रही हैं।''[486]

'अक्षयवट' (2003) और 'कुइयांजान' (2005) की कथावस्तु का गठन

---

[484] नासिरा शर्मा– जिंदा मुहावरे, नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन, सन् 1994, पृ० 123

[485] नासिरा शर्मा– जिंदा मुहावरे, नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन, सन् 1994, पृ० 127

[486] नासिरा शर्मा– जिंदा मुहावरे, नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन, सन् 1994, पृ० 08

इलाहाबाद को आधार बनाकर किया गया है लेकिन दोनों के सरोकार वैश्विक हैं। 'अक्षयवट' की पृष्ठभूमि इलाहाबाद है जिसमें नासिरा शर्मा ने विभिन्न घटनाक्रमों के माध्यम से विभिन्न प्रकार की समस्याओं से जूझते, डूबते–उतराते मनुष्य और जर्जरित जीवन से त्रस्त किंकर्तत्व्यमूढ़ समाज का खाका खींचा है। पुलिस और अपराधियों की साँठगाँठ, चोरी, डकैती, जेबकतरी, लूटमार, अपहरण, हत्याएँ, बलात्कार, फिरौती, अवैध कब्जे, जमीन के घपले, तस्करी, माफिया, शराब की भट्टी के कारनामों का सुसंगत तरीके से पर्दाफाश किया है। सरकारी अस्पतालों, दफतरों, महापालिका, कचहरी और शंकित न्यायपालिका पर तीखी नजर डाली है। नस–नस में व्याप्त भ्रष्टाचार के माहौल में पल रहे नौजवानों, बेरोजगारों की पीड़ा को गहराई से विश्लेषित किया है। यदि कह दिया जाए कि इसके माध्यम से लेखिका ने केवल इलाहाबाद के ही नहीं अपितु वैश्विक स्तर पर हो रहे भ्रष्टाचार को दर्शाया है तो अतिश्योक्ति न होगी। इन सभी को उद्घाटित करने में उपन्यास का मुख्य पात्र जहीर व उसके अन्य साथी रमेश, जुगनु, मुरली, बसंत, सुरेंद्र, सतीश मोजमदार, अशोक मिश्रा व श्यामलाल त्रिपाठी महत्तवपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जहीर, मुरली, सलमान, बसंत, रमेश, जगन्नाथ मिश्रा ऐसे पात्रों के रूप में उभरे हैं जिनके स्वप्न विपरीत परिस्थितियों के कारण पूरे न हो सके। ये सभी घनिष्ठ मित्रता के सूत्र में बँधकर न केवल समाज में हो रहे अनाचार व दुराचार के विरूद्ध आवाज उठाते हैं अपितु शोषित जनों की सहायता को तत्पर रहते हैं।

इंस्पेक्टर त्रिपाठी उपन्यास में खलनायक की भूमिका का निर्वाह करता है। स्वयं पर हुए अत्याचारों का बदला लेने के लिए इलाहाबाद में ही पुलिस इंस्पेक्टर का पद प्राप्त करता है तथा अत्याचार, जालसाज, भ्रष्ट और घिनौनी हरकतों का प्रतीक बन जाता है। ''ऐसा कोई भी अपराध नहीं था जो उसने न किया हो। हत्या, अपहरण, कत्ल, कब्जा, बलात्कार न जाने क्या–क्या कर डाला है। इतना बड़ा क्रिमिनल पुलिस डिपार्टमैंट में, पुलिस की वर्दी पहने बैठा है, यह बहुत आश्चर्य की बात है।''[487] इन सब कार्यों में वह अकेला नहीं था बल्कि राजनीतिज्ञ देवीशंकर, विश्वकर्मा, रामसेवक, वकील जमील अंसारी इसका साथ देते हैं। लेकिन कहा जाता

[487] नासिरा शर्मा– अक्षयवट, नई दिल्लीः भारतीय ज्ञानपीठ, सन् 2003, पृ० 312

है कि ' सत्यमेव जयते' अर्थात् सत्य की हमेशा जीत होती है। इसीलिए श्यामलाल व उसके अत्याचारों का अंत होना अनिवार्य था। एस० एस० पी० सतीश मोजमदार, गौरव दत्ता व अशोक मिश्रा द्वारा श्यामलाल को पकड़ने का प्रयास किया जाता है जिसमें वे सफल भी होते हैं और वह इन सबसे बचने के लिए आत्महत्या कर अपनी जीवन लीला समाप्त कर लेता है। इस स्थानीय संघर्ष के पश्चात् जहीर और उसके मित्रों की मनोदशा भी परिवर्तित हो चुकी थी। उनके अन्दर का आक्रोश अब तर्कसंगत सोच में बदल चुका था। जहाँ ललकार, पुकार, चुनौती का कोई अर्थ नहीं रह गया था बल्कि उस परिसंवाद की उन्हें तलाश थी जिससे वह अपना और दूसरों का जीवन सुधार सकें। मगर उन्हें गलत समझौता अब भी मंजूर न था अतः अब उनका एकमात्र मंतव्य यही है कि ''जहाँ अन्याय हो रहा हो, वहाँ न्याय दिला सकें। जहाँ अत्याचार हो रहा है, उसके विरूद्ध आवाज उठा सकें। जहाँ कोई किसी को सता रहा हो उसको मुक्ति दिला सकें तो दिलाएं।''[488] इस सोच के माध्यम से उपन्यासकार समाज को सकारात्मक सोच अपनाने का संदेश भी देती हैं।

जल धरती पर पाए जाने वाले पदार्थों में सबसे साधारण लेकिन गुणों में विशिष्ट एवं असाधारण है। इसके इन्हीं गुणों के कारण पृथ्वी पर जीवन न केवल अस्तित्व में आया और विकसित हुआ अपितु आज भी पृथ्वी पर बरकरार है। लेकिन वर्तमान समय में जल का गिरता स्तर केवल भारत के लिए ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्व के लिए एक गंभीर समस्या बन चुका है जिसके लिए सभी चिंतित हैं। इन्हीं जल समस्याओं को केंद्र में रखकर 'कुइयांजान' (2005) की कथा का ताना–बाना बुना गया है और गिरते जल–स्तर की वैश्विक विकरालता से साक्षात्कार करवाती लेखिका कहती हैं–''आज विश्व के आँकड़ों द्वारा ज्ञात होता है कि लगभग एक अरब से ज्यादा लोगों को साफ पानी पीने के लिए उपलब्ध नहीं है। दो अरब लोगों को नहाने–धोने के लिए पानी नहीं मिल पाता, जिससे लोग अनेक तरह के रोगों का शिकार हो रहे हैं। मृत्यु–दर दिन–प्रतिदिन बढ़ती चली जा रही है। भारत में गाँवों, कस्बों, शहरों में लोग कुआँ, तालाबों और नदियों से पानी लेते हैं जो अधिकतर गंदा और कीटाणुयुक्त होता है। उसमें प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले

[488] नासिरा शर्मा– अक्षयवट, नई दिल्लीः भारतीय ज्ञानपीठ, सन् 2003, पृ० 226

संखिया की मिलावट होती है।...''[489] इसीलिए राजस्थान में लोग कहीं सूखेपन से व्याकुल हैं तो कहीं गंदे पानी से वहाँ ऐसी बीमारियाँ फैल रही हैं कि '' पैरों से पतले–पतले केचुएनुमा लंबे–लंबे कीड़े बाहर निकलते थे जो पैरों की माँसपेशियों को शिथिल बना देते थे।''[490] नासिरा शर्मा ने उपन्यास में इस तथ्य की ओर भी इंगित किया है कि यदि ऐसा ही चलता रहा तो '' ऐसा दौर जल्द ही आ जाएगा जब हीरे के मौल पानी मिलेगा और पूँजीपति उसको अपनी तिजोरी में बंद कर रखेंगे। तब डकैतियाँ पानी की बोतल के लिए पड़ेंगीं। बैंक लॉकर लूटे मिलेंगे केवल खालिस पानी के लिए जिसकी कीमत अंतरराष्ट्रीय बाजार में करोड़ों होगी। यह फैंटसी नहीं, बल्कि आने वाले समय में पानी की दुर्लभता की पूर्वघोषणा है। यह मजाक नहीं, बल्कि पानी के बढ़ते महत्व का सच है।''[491] इस प्रकार रचनाकार ने भविष्य के यथार्थ का चित्रांकन कर अपनी सूक्ष्म दृष्टि का परिचय दिया है। ऐसा नहीं है कि लेखिका ने केवल समस्या को ही उभारा है अपितु उसके समाधान के रूप में जहाँ एक ओर 'कुइयांजान' में बरसात के पानी को एकत्रित करने के साथ राजस्थान की प्राचीन जल–संचय परम्परा 'वोज' और 'कुइयां' के द्वारा अधिकाधिक जल संचय का तथा 'जीरो रोड' उपन्यास में ''गंदे पानी को रिसायकिल कर काफी हद तक समस्या को हल करने''[492] का संदेश दिया है। पानी की भीष्ण व ज्वलंत समस्या के साथ–साथ मध्यवर्गीय जीवन की दास्तान को भी उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है जिसमें प्रेम, छेड़छाड़ तथा विभिन्न परिस्थितियों में पारिवारिक–सामाजिक बनते–बिगड़ते संबंधों का प्रकटीकरण किया गया है। इन सभी विशेषताओं के कारण प्रसिद्ध आलोचक डॉ० नामवर सिंह ने 'कुइयांजान' को सन् 2005 का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास घोषित किया और इसी उपन्यास के लिए सन् 2008 में हाऊस ऑफ लॉर्डस (लंदन) में नासिरा शर्मा को 14 वें अंतरराष्ट्रीय' इंदू कथा सम्मान' से सम्मानित किया गया।

लेखिका ने अपने दो अंतिम उपन्यासों' जीरो रोड' (2008) व 'पारिजात'

---

[489] नासिरा शर्मा– कुइयांजान, नई दिल्लीः सामयिक प्रकाशन, सन् 2005, पृ० 88

[490] नासिरा शर्मा– कुइयांजान, नई दिल्लीः सामयिक प्रकाशन, सन् 2005, पृ० 118

[491] नासिरा शर्मा– कुइयांजान, नई दिल्लीः सामयिक प्रकाशन, सन् 2005, पृ० 37

[492] नासिरा शर्मा– कुइयांजान, नई दिल्लीः सामयिक प्रकाशन, सन् 2005, पृ० 37

(2011) में मनुष्य की संवेदना–शून्य मानसिकता एवं परिवर्तित संबंधों की कहानी को कहा है। 'जीरो रोड' के कथातंतु इलाहाबाद से दुबई तक विस्तृत हैं जिसमें रचनाकार ने न केवल निम्न मध्यवर्गीय भारतीय परिवारों की आर्थिक तंगी को उभारा है अपितु प्रवासी मानसिकता, बड़े शहरों का अकेलापन, साम्प्रदायिकता और आतंकवाद से जूझती पूरी दुनिया को एकसूत्र में गूंथकर उपन्यास के माध्यम से पाठक के समक्ष प्रस्तुत किया है। सिद्धार्थ व उसके मित्रों–केरलवासी रामचंद्रन, इंजीनियर श्रीनिवासन, ईरानी फिरोज मीखची, जाजफ सउद, पाकिस्तानी बरकत उसमान, बंग्लादेशी सुदर्शन, सूरत के डॉ० शाहआलम, इराकी असद खजूरी, लतीफ फरमान, फिलिस्तीन सफीर, जारयाब, गुलफाम आदि सम्मिलित हैं जो किसी न किसी कारणवश अपने देश से उखड़, अपने परिवारों को छोड़ दुबई में रहते हैं। प्रत्येक शाम इकट्ठे होकर अपने दुःखों व अकेलेपन को बांटने का प्रयास करते हैं। इन बैठकों में आधुनिक समस्याओं से जुड़ी विभिन्न प्रकार की वार्ताएँ होतीं। इनकी बातचीत के माध्यम से ही नासिरा शर्मा ने विश्व में हो रही हिंसा को व्यक्त किया है। जैसे–गोधरा कांड, निठारी कांड में बच्चों पर हुए अमानवीय अत्याचार, रामजन्मभूमि–बाबरी–मस्जिद विवाद में हिंदू–मुस्लिम मतभेद, मुम्बई में बम–विस्फोट, अमेरिका के वर्ल्ड ट्रेड सेंटर पर हमला, अमेरिका का कुवैत पर आक्रमण, ईरान–इराक युद्ध आदि। भारतीय परिवेश में "आज भ्रष्टाचार, दुल्हन को जलाना, बाबरी–मस्जिद व रामजन्म भूमि समस्या, भूख से दम तोड़ते लोग, आत्महत्या करते किसान"[493] आदि समस्याएँ प्रमुख रूप से देश के विकास को अवरूद्ध करती है। आधुनिक युग में मानव–मानव का तो शत्रु बनता ही जा रहा है। साथ ही साथ उन बच्चों के प्रति भी, जो मासूम व दुनिया के छल–कपट से दूर हैं, वैमनस्य रखता है। स्पष्ट है कि 'जीरो रोड' उपन्यास में युगीन परिवेश की यथार्थता व उससे जूझते मानव की दशा को प्रकट किया है। उनके शब्दों में "यह समय, जिसमें हम जी रहे हैं, वास्तव में सनसनी और सदमों से भरा हुआ है। घटनाएँ हर दिन नये ढंग से इन्सान के विश्वास को तोड़ने का षड्यंत्र रचती है। ...लाख अवसाद से भागने, बचने की कोशिश करो मगर वह आपका पीछा लगातार करता रहता है। एक भय

---

[493] नासिरा शर्मा–जीरो रोड, नई दिल्लीः भारतीय ज्ञानपीठ, सन् 2008, पृ० 313

की संरचना लगातार आपकी कोशिकाएँ रचती रहती हैं जो आपको निरंतर निर्बल बनाती हैं, लाख आप आत्मा को मजबूत रखने की कोशिश करें मगर शरीर इन सदमों से कमजोर पड़ता है।''[494]

'पारिजात' उपन्यास की सबसे बड़ी विशेषता साम्प्रदायिक सद्भाव है जिसका प्रकटीकरण तीन मित्रों प्रह्लाद दत्त, बशारत हुसैन, जुल्फिकार अली के माध्यम किया है जो प्रत्येक स्तर पर एक–दूसरे का साथ देते हुए भावनाओं को महत्त्व देते हैं। नासिरा शर्मा ने किसी एक धर्म को विशेष महत्त्व न देकर सभी धर्मों को समान माना है क्योंकि ''धर्म केवल योजनाबद्ध तरीके से जीवन जीने का एक रास्ता है। आज धर्म को समझना बेहद जरूरी हो जाता है क्योंकि उसका गलत प्रयोग इंसानों की जिंदगी को बेहद दुश्वार बना रहा है।''[495] अतः स्पष्ट है कि इसका नामकरण ' पारिजात' भी शायद इसी आधार पर रखा गया है। जब यह पेड़ फूलता है तो बराबर इसके फूल झरते रहते हैं और यह फिर भी फूलों से लदा रहता है या इसलिए कि यह दोरंगी फूल हैं जिसमें फर्क कर पाना मुश्किल है कि एक रंग कहां खत्म होता है और दूसरा कहाँ से शुरू। जैसे भारत के दो धर्मों का एक–दूसरे में रचा–बसा होना या फिर इस फूल की यह खूबी कि सूख जाने के बाद भी अपनी खुशबू और रंग दोनों कायम रहते हैं जैसे इस देश में हिंदुओं और मुसलमानों का रिश्ता, जो लाख अलगाववाद के बाद भी दोस्ती और मोहब्बत से महकता है।

'बहिश्ते–ज़हरा' उपन्यास ईरानी क्रान्ति पर लिखा विश्व का पहला ऐसा उपन्यास है जो एक तरफ पचास साल पुराने पहलवी साम्राज्य के उखड़ने और इस्लामिक गणतंत्र के बनने की गाथा कहता है ईरान राजनैतिक और सांस्कृतिक की विशेषज्ञ होने के कारण उन्होंने ईरान क्रान्ति, वहाँ की परिस्थितियाँ, रहन–सहन युवा–वर्ग, दोहरा जीवन जीती नारी, उसके संवेदनाओं पर विशेष रूप से अपनी लेखनी चलाई हैं नासिरा शर्मा ईरान राजनैतिक, सांस्कृतिक सन्दर्भों को लेकर मानवीय भावनाओं और संवेदनाओं का ही वर्णन करती है। इसके अतिरिक्त वर्षों से चले रहे हैं, इस्त्रायली–फलस्तीन संघर्ष, ईरान–इराक युद्ध, ईरान का अरब विरोधी

---

[494] नसिरा शर्मा–पारिजात, नई दिल्लीः किताबघर प्रकाशन, सन् 2011, पृ० 32

[495] नासिरा शर्मा–खुदा की वापसी, नई दिल्लीः किताबघर प्रकाशन, सन् 1998, पृ० 9

होना, अफगानिस्तान आदि पर अपनी विचारधारा व्यक्त कर लेखिका का अरब विरोधी होना, अफगानिस्तान आदि पर अपनी विचारधारा व्यक्त कर लेखिका ने केवल मानव–मात्र की पीड़ा का चित्रण किया है, जो पूरे विश्व में एक जैसा है, उसकी दो आँखे, दो कान, दो हाथ हैं। वह प्रत्यक्ष रूप से हर जगह एक सा है।

नासिरा शर्मा की कहानियों में तपाए हुए कंचन की आब है। उनका गद्य गंभीर है। संवेदना के स्पंदन से उद्देलित है। नासिरा शर्मा का 'शामी कागज' कहानी भी विधवा समस्या पर आधारित है। नायिका पाशा का मन दूसरे पुरूष को स्वीकार नहीं कर सकता। 'खुशबू का रंग' की नायिका अपना सारा जीवन मृत प्रेमी की यादों के सहारे जीती है। 'मिश्र की ममी' की नायिका को पति से सन्तान प्राप्ति न हुई तो इस इच्छा को लेकर अपने पूर्व प्रेमी के पास चली जाती है। 'दादगाह' कहानी का नायक अकबर आजीवन अविविाहित रहने का प्रण करता है। प्रेम, क्योंकि उसके अनुसार विवाह एक सामाजिक सम्बन्ध है जो वास्तव में एक–दूसरे का शील भंग करने का अच्छा तरीका है। वह आवश्यकता पड़ने पर भी अपनी किसी महिला मित्र के पास जाकर अपने तृष्णा का समाधान कर लेता है। इसी प्रकार 'औबे–तौबा' कहानी का शमशाद भी लगभग पचास महिलाओं के सम्पर्क में आ चुका है। 'मुटठी भर धूप' की रेखा का विवाह दहेज के अभाव के कारण ही एक दरिद्र परिवार में होता है। उस नई–नवेली दुल्हन को अपने ससुराल की आर्थिक स्थिति सुधार के लिए विदेश में नौकरी करनी पड़ती है ताकि वह हर माह उन्हें पैसे भेज सके। विवाह के पहले माह ही उसे पाँच वर्ष के लिए पति से अलग कर दिया जाता है।

'पत्थर गली' के माध्यम से नारी अस्मिता, उसके जीवन बिम्ब, रिश्तों की बेबसी, संबंधों का स्थायित्व, स्वार्थपरता, आत्मीयता का अभाव, बाजार के से उतार–चढ़ाव की जिन्दगी, उदासियों का अंधेरापन और कहीं कोई रोशनी की लकीर–सी निर्बाध बहती हंसी.... जो नारी जीवन की लंबी–लंबी गलियों से गुजरती, आंसू, दर्द, उत्पीड़न और शोषण का चिलमनों से सरकती हुई कागज के बदन को स्पर्ष करती है। 'पत्थर गली' में एक बालिका खुलकर जीना चाहती है उसका जीवन इतने बन्धनों और मर्यादाओं में जकड़ा है कि वह घुटकर मानसिक सन्तुलन खो बैठती है।

'संगसार' कहानी संग्रह की सभी कहानियाँ ईरान की क्रान्ति के दौरान उपजी मानवीय पीड़ा का बयान है। पाठक अपनी तरह के दिल व दिमाग रखने वाले दूसरे इन्सानों की कहानियाँ पढ़कर अपनी साझी मानवीय विरासत के आईने में उसके दुख–सुख में अपना चेहरा देख पाने में सफल हो सकेंगे। जो दूसरे देश में रहकर भी हमारी तरह एक दिल, एक दिमाग, दो आँख, दो हाथ–पैर रखने वाले इन्सान हैं।

'इब्ने मरियम' कहानी संग्रह की सारी कहानियाँ एक विशेष स्थिति की हैं जिसमें फँसा इन्सान जीने के लिए छटपटाता है। कभी उसका यह संघर्ष अपने अधिकार को पाने के लिए होता है। तो कभी समाज को बेहतर बनाने के लिए करता है। जिसमें इतिहास के दरीचे खुले हुए थे। 'इब्ने मरियम' कहानी संग्रह की प्रत्येक कहानी इंसान संघर्ष की दास्तान बयाँ करती है। भारत, युगांड़ा, फिलिस्तीन, इथोपिया, अफगानिस्तान, सीरिया, स्कॉटलैण्ड, बांग्लादेश, कनाड़ा, इराक, टर्की और पाकिस्तान की भिन्न सांस्कृतिक पृष्ठभूमियाँ किन्तु संवेदना का धरातल एक ही इन्सानी संघर्ष छटपटाहट एक जैसी भूख, गरीबी, बदहाली, सत्ता पक्ष को वर्चस्ववादी नीति जिसके पैरों तले रौंद दी गई मनुष्य की पहचान, मनुष्यता का अधिकार। यही कारण है कि 'इब्ने मरियम' की ये कहानियाँ इंसानी संवेदनाओं को पूरी प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत करती है।

'सबीना के चालीस चोर' कहानी संग्रह की कहानियों के कथा–सूत्रों में बुनियादी विचारों का समावेश है। सबीना एक छोटी लड़की है, जो बड़ों जैसी दृष्टि और समझ रखती है। उनका मानना है कि फसाद कराने वाले, दूसरों का हक मारने वाले ही चालीस चोर हैं जो हमेशा कमजोर वर्ग को दबाते हैं। इसी सबके बीच बार–बार अपने होने का अहसास दिलाती छोटी–छोटी मगर समझदार लड़कियाँ समूचें संघर्ष का हिस्सा है। अलग–अलग कहानियों में अलग–अलग किरदार निभाती सबीना से लेकर गुल्लों, सायरा, चम्पा, मुन्नी जैसी लड़कियों में नासिरा शर्मा खुद को ही प्लांट करती है। दर्द की बस्तियों की ये कहानियाँ जिस भारतीय आबादी का प्रतिनिधित्व करती है वही इस देश की बुनियाद है। ये कहानियाँ हिन्दुस्तान की सच्ची तस्वीर हैं, जिनका अंतर्सगीत इनके कथानकों के तारों से छिपा है जिन्हें ज़रा–सा छेड़ों तो मानवीय करूणा का अथाह सागर ठाठें

मारने लगता है।

नासिरा शर्मा का कहानी संग्रह 'खुदा की वापसी' के दो अर्थों में लिया जा सकता है–एक तो यही कि यह सोच अब जा चुकी है कि पति एक दुनियावी खुदा है और उसके आगे नतमस्तक होना पत्नी का परमधर्म है और दूसरा है उस खुदा की वापसी, जिसने सभी इन्सानों को बराबर माना और औरत–मर्द को समान अधिकार दिये है। इस संग्रह की कहानियों को बराबर माना और औरत–मर्द को समान अधिकार दिये हैं। इस संग्रह की कहानियों में ऐसे सवालों के इशारे भी हैं कि जो हमें उपलब्ध है। उसे भूलकर हम उन मुद्दों के लिए क्यों लड़ते हैं। जिन्हें, धर्म, कानून, समाज परिवार ने हमें नहीं दिया? जो अधिकार हमें मिलता है। जब उसी को हम अपनी जिन्दगी में शामिल नहीं कर पाते और उसके बारे में लापरवाह रहते हैं, तब किस अधिकार और स्वतन्त्रता की अपेक्षा हम खुदा से करते है। 'खुदा की वापसी, की सभी कहानियाँ उन बुनियादी अधिकारों की माँग करती नजर आती है। जो वास्तव में महिलाओं को मिले हुए है। मगर पुरूष–समाज के धर्म पण्डित मौलवी मौलिक अधिकारों को भी देने के विरोध में हैं, 'खुदा की वापसी' की कहानियाँ एक समुदाय विशेष का होकर भी विभिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करती है।

'इन्सानी नस्ल' कहानी संग्रह की सभी कहानियाँ बड़ी सादगी से जीवन मे यथार्थ को सामने रखती है। मानवीय संवेदना और बुद्धि का तर्क जाल का द्वन्द्व के रूप में निरन्तर टकराता हुआ इन कहानियों की अन्तर्धारा को एक–अलग पहचान भी देता है। इन कहानियों में प्रेम का एक निर्मल संसार भी देखने को मिलता है। प्रेम का यह संसार दाम्पत्य जीवन का प्रेम भी है, जहाँ अलग–अलग धर्म के स्त्री–पुरूष, पति–पत्नि का सम्बन्ध स्वीकार करते है।

विश्व में फैले आतंक, फसाद, पलायन प्रेम, अपनापन, भावनाओं की बात कर नासिरा शर्मा एक आम व्यक्ति तक यह बात पहुँचाना चाहती है कि मानव एक देश और जन्मभूमि की तंग परिधि से निकल एक हो जाए। हम ईरानी हें, हिन्दुस्तानी हैं, अफगानी हैं, पाकिस्तानी है, इंगलिस्तानी हैं? आखिर क्यों नहीं हम सिर्फ इन्सान हो जाएँ, जिनका रिश्ता धरती से है, आसमान से है, अपने पेट से है। नासिरा शर्मा के साहित्य में छिपे सन्देश को उनके साहित्य को सरसरी नजर से देखकर नहीं ढूँढा जा सकता है। इसके लिए एक बुद्धिजीवी, एक संवेदनशील व्यक्ति की नजर की

आवश्यकता है और इस बात को लेखिका स्वयं भी मानती हैं मानवता का सन्देश देने वाले कथाकारों की आज के परिवेश में बहुत आवश्यकता है। आशा है नासिरा शर्मा अपने साहित्य के प्रकाश से दीर्घ काल तक मानव जाति का पथ–प्रदर्शन करती रहेगी।

22 अगस्त 1948 को इलाहाबाद में जन्मी नासिरा शर्मा हिंदी साहित्य की अग्रपंक्ति में स्थान रखती हैं। उन्होंने फारसी भाषा और साहित्य में एम.ए. किया। हिंदी, उर्दू, अंग्रेजी, पश्तो एवं फारसी पर उनकी गहरी पकड़ है। वह ईरानी समाज और राजनीति के अतिरिक्त साहित्य, कला व संस्कृति विषयों की विशेषज्ञ हैं। 'साहित्य अकादमी' सम्मान से विभूषित नासिरा शर्मा ने उपन्यास, कहानी, लेख, रिपोर्ताज, संस्मरण, अनुवाद, आलोचना आदि अनेकानेक विधाओं में अपने समय के प्रति जिम्मेदार लेखन किया है। ईराक, अफगानिस्तान, सिरिया, पाकिस्तान व भारत के राजनीतिज्ञों तथा प्रसिद्ध बुद्धिजीवियों के साथ उन्होंने साक्षात्कार किये तथा कई नाटक लिखे जो बहुचर्चित हुए। 'अदब में बायीं पसली' के छह खंडों में एफ्रो–एशियाई कवियों लेखकों की कविताओं, कहानियों आदि का प्रकाशन एक ऐतिहासिक योगदान है। उन्होंने रेडियो धारावाहिक तथा टी.वी. धारावाहिक लिखकर भी अपनी तरह का अनूठा योगदान दिया है। इराक के रमांदी कैम्प में ईरानी युद्ध बंदियों पर बनी फिल्म में भागीदारी की, जिसमें उनके साक्षात्कार के बाद 100 बाल बंदियों की पहली खेप की आजादी की शुरूआत हुई। आपने इंग्लैंड, ईरान, इराक, सिरिया, दुबई, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, फ्रांस, थाइलैंड, हांगकांग, नेपाल आदि देशों की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक यात्राएं की हैं।

देश–विदेश में साहित्य और विचार के क्षेत्र की नामचीन शख्सियत नासिरा शर्मा को पहला 'पूर्वकथन सम्मान' (2020) प्रदान किया गया है। प्रख्यात साहित्यकार नासिरा शर्मा साहित्यिक फलक पर देदीप्यमान एक ऐसा नक्षत्र है जिनके नाम साहित्यिक उपलब्धियों की एक बहुत लंबी और चमकदार फेहरिस्त है। इस सम्मान के तहत नासिरा जी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर 'पूर्वकथन' द्वारा विशेषाँक का प्रकाशन, 11,000 रुपए नकद, एक शॉल और सम्मान–पत्र प्रदान किया गया है।

राजेश पटेल द्वारा नासिरा शर्मा जी से लिये गये साक्षात्कार का महत्वपूर्ण अंश निम्नलिखित है :–

राजेश पटेल : आप अपने जन्म, शिक्षा–दीक्षा और पारिवारिक पृष्ठभूमि के बारे में कुछ बताएं।

नसिरा शर्मा : मेरा जन्म इलाहाबाद में उर्दू प्रोफेसर एस.एम. जामिन अली के यहाँ हुआ था। मेरे नौ बहन भाई थे। जिस में से हम पाँच जिन्दा रहे। दो भाई और दो बहनें। मैं चौथी औलाद थी। बड़े भाई हैदर अली जो अंग्रेजी भाषा के अध्यापक थे। उनसे छोटी बहन फात्मा हसन जो उर्दू भाषा में कहानियाँ लिखती थीं। उनका कुछ काम उतर प्रदेश के खनाबदोशों और कबीलों पर था। उनसे छोटी बहन मंसूरा हैदर थीं। वह हिस्टोरियन थीं और उर्दू में शायरी करती थीं। मगर उन्होंने कभी छपवाने की ख्वाहिश नहीं रखी फिर मैं और मेरे बाद मेरा छोटा भाई मजहर हैदर जो अंग्रेजी के पत्रकार थे। हमारे यहाँ लिखने–पढ़ने की खुली छूट थी घर में बहुत शानदार लाइब्रेरी थी जिस में नायाब पुस्तकें व पाण्डुलिपियाँ थीं। हमारा खानदान सादगी पसंद था मगर उस में सौन्दर्यबोध था। हमारा खानदान तीन–चार विचारधाराओं व पार्टी के अनुयायी रहे हैं–कांग्रेस, साम्यवादी, किसान आन्दोलन, धार्मिक मगर उन सब की मूलप्रवृत्ति केवल साहित्यिक रही। जमींदारी के समय और बाद में नौकरी पेशा अपनाने के बाद भी वह साहित्य–संगीत से जुड रहे हैं। मैंने बचपन में ही उन्हें खो दिया था मगर उनके चर्चे शहर के विभिन्न वर्गों के इंसानों से बहुत सुने हैं। उन्हें गोल्फ खेलने का शौक था। मुशायरों की महफिलें तो जमती ही थीं। शायर हमारे मेहमानखाने में रहते जो बाहर से आते। अंग्रेजों का भी खूब आना–जाना था। गाँव में आस–पास के अदीबों–कवियों की महफिलें जमती मगर यह सब मैंने नहीं देखा। पंडित नेहरू व गाँधी जी भी तश्रीफ लाते थे। मैं आजाद भारत में पैदा हुई जब होश संभाला तो मेरे अपनी दुनिया व उसका परिवेश था। जो बिल्कुल एक दूसरे से जुदा था। मैंने शुरुआत में कानवेंट से पढ़ाई शुरु की फिर लड़कियों में शिक्षा फैले उस आन्दोलन व विचार के चलते मैंने ग्रेजुएशन दूसरे कॉलेज से किया और आखरी एम.ए. की डिग्री मार्डन फारसी में ली।

राजेश पटेल : साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण का अवसर आपको विरासत के रूप में मिला अथवा इसके लिए आपको खुद की मेहनत करनी पड़ी!

नसिरा शर्मा : दोनों ही बातें सच हैं। हमारे वारिसों का सिलासिला रहा है जिस में कवि और लेखक दोनों रहे हैं। कुछ अपने समय के लोक प्रिय एवं मशहूर साहित्यकार रहे। जिनकी किताबे छपीं वह दीमकों से बच नहीं पाई और यही हाल पाण्डुलिपियों का हुआ। इस सब तबाही के बाद जो बचीं वह हस्त–लिखित हैं जिनकी सियाही अभी तक मद्धिम नहीं पड़ी है जो हैरत में डालती हैं। हमारे पुरखों ने कई भाषाओं में रचनाएँ लिखी–अवधी, उर्दू, फारसी, अरबी, अंग्रेजी और नई पीढ़ी ने उस में हिन्दी भाषा जोड़ दी। अब रहा मेरा सवाल तो मैं उस समय बड़ी हुई जब खानदान का शानदार शामियाना उतर चुका था। बटवारा देश का और जमींनदारी व्यवस्था का टूटना एक साथ हुआ। संयुक्त परिवार टूटा, जो पढ़ लिख कर बेकार बने रहे और कुछ समय की डोर पकड़ हर तरह से तरक्की की तरफ बढ़ने लगे। उन से गांव और खेत छूटने लगे वह नौकरी पेशा होकर शहर के बन गए। मेरी किशोर अवस्था तन्हा रही। बड़े भाई–बहनों की शादियाँ और वालिद की मौत ने मुझे ऐसा कोई बुजुर्ग या साथी नहीं दिया जो मेरी रहनुमाई कर सकता सिवाए अम्मा के प्रोत्साहन के जो शिक्षा एवं साहित्य के प्रति बहुत उत्साहित और जागरूक थीं। स्कूल की क्रिश्चियन प्रिंसिपल जो नए हिन्दूस्तान के लिए हमें हर तरह से तैयार कर रही थीं और हमारे अंदर छुपी हर खूबी को निकालने के लिए कोशिश में कार्यक्रम व पुरस्कार रखती थीं उनके रिटायरमेन्ट के बाद नई प्रिंसिपल जो आई वह हमें जागरूक नागरिक और रचनात्मकता से भरपूर बनाने की जगह हमें पीछे ले जाने लगीं जिस से हमारा दम घुटता था। जब हम विश्वविद्यालय पहुँचे तो सतही सियासत के चलते छह माह कोई क्लास ही नहीं हुई जैसे तैसे हम सब ने बी.ए. की डिग्री ली। यही हाल साहित्य में रहा कि न कोई उस्ताद रहा न गाडफादर न ही कोई रिश्तेदार, इसलिए लेखन में भी मुझे अपनी जमीन खुद खोदनी और तराशनी पड़ी।

राजेश पटेल : आपकी पहली रचना कब और कैसे प्रकाशित हुई? लेखन की प्रेरणा आपको किससे व कैसे प्राप्त हुई ?

नसिरा शर्मा : घर जब तक भरा पुरा था लिखने पढ़ने का माहौल रहा इसलिए खुद भी लगता था कुछ लिखना चाहिए। कॉलेज की मैगज़ीन में एक रिर्पोताज आस्ट्रेलिया पर वहाँ जाए बिना लिखी थी उसका कारण घर की लाइब्रेरी

में एक सचित्र पुस्तक थी उसे पढ़ने और देखने में बहुत मज़ा आता था। दूसरे एक कहानी 'बच्चों की पत्रिका में छपी थी। कुछ चीजें लिखती रही। माँ तो खुश होती थीं साथ ही मेरी सहेलियाँ और टीचर भी मगर सच तो यह है कि अदब पढ़ने और उस पर बातें करने से लिखने के प्रति आकर्षण किशोर अवस्था से ही हो गया था। फिर 1976 में सरिका के नवलेखन अंक में 'बुतकाना' छपी थी। उस समय सरिका के सम्पादक कमलेश्वर जी थे।

राजेश पटेल : आपने हिन्दी साहित्य की अनेक विधाओं में व्यापक लेखन कार्य किया है? आपकी सबसे प्रिय विधा क्या है?

नसिरा शर्मा : मैं ऐसा तो नहीं कह सकती हूँ कि कौन–सी विधा मुझे ज़्यादा पसन्द है मगर अब मुझे महसूस होता है कि हर विधा का एक मौसम होता है जैसे एक जमाने में मैंने कहानियाँ ज़्यादा लिखीं और कोई उपन्यास नहीं लिख पाई। 'जिन्दा मुहावरे' मेरा चौथा उपन्यास 1999 में आया, और उसके बाद कहानियों और लेखों का संग्रह आता रहा। अब इधर अरसे से मेरा कोई कहानी संग्रह नहीं आया और 2003 से 2017 तक कुल आठ उपन्यास आए नवां प्रेस में है। फिर भी कहानी लिख कर आप को जल्द मुक्ति मिल जाती है और खुशी का अहसास होता है मगर उपन्यास में लम्बे समय तक आपको उस में डूबा रहना पड़ता है तब जाकर आप सृजन की पीड़ा से मुक्त हो पाते हैं।

राजेश पटेल : आप देश की पत्र–पत्रिकाओं में पिछले लगभग छह दशकों से अधिक समय से अनवरत लिख रहे हैं, अपने पाठकों पर आपने क्या सोचा है?

नसिरा शर्मा : दरअसल पाठक लेखक की दौलत होते हैं और सच्चे पारखी, जबकि आलोचक निष्पक्ष नहीं हो पाते, कहीं पर साहित्यिक सियासत तो कहीं पर पसन्द न पसन्द और कहीं पर विषय को गहराई से न समझ पाने के कारण वह पूरी तरह न्याय नहीं कर पाते हैं मगर पाठक, अपने अन्दर उपजे सवाल पूछते हैं संवाद करते है और कृति को समझने की कोशिश करते हैं साथ ही वह कुछ जगहों पर अपनी असहमति भी प्रकट करते हुए अपना दृष्टिकोण भी रखते हैं। इन सारी बातों को ध्यान में रखते हुए कह सकती हूँ पाठक लेखक के सही पारखी होते हैं।

राजेश पटेल : आपको लेखक बनाने में किसका प्रमुख योगदान रहा परिस्थितियों का या अपने जिद्दी अथवा हठी स्वभाव का ?

नसिरा शर्मा : मुझे लेखक बनाने में दोनों का कोई योगदान नहीं रहा। कोई किसी को कैसे लेखक बना सकता है यदि उस में सृजन की क्षमा व गुण न हों मगर प्रोत्साहन जरूर दे सकता है। सही और गलत की समझ दे सकता है कि लेखन में क्या जरूरी और क्या ज्रूरी नहीं होता है। किसी भी कृति की तराश ही उसको कसौटी पर खरी उतारती है। दूसरे यही बात आपके सवाल के दूसरे पक्ष पर भी लागू होती है। परिस्थितियाँ ठोकरें मार कर आपको परिपक्व बना सकती हैं। समझ बढ़ा सकती हैं मगर लेखक कैसे बना देंगी? लेखक किसी मजबूरी की तहत नहीं बनता बल्कि मजबूरी और जिन्दगी का उतार चढ़ाव उसके लेखकिय गुण व दृ ष्टि में गहराई की क्षमता व अनुभूतियों की बारीकियाँ बढ़ाता है। बेशक कोई जिद या हठ में लेखक बन भी गया तो मेरी नज्र में लिखना और सृजन करना दो अलग बातें हैं। इसलिए यह दोनों ही चीजें मुझे लेखक बनाने में सीधे कारगर साबित नहीं हुई। हर इन्सान में कुछ न कुछ खूबियाँ होती हैं उन खूबियों को अगर निखरने का अवसर मिल जाता है तो वह कुछ कर दिखाती हैं।

राजेश पटेल : आपके साहित्य पर देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में पीएचडी और एम फिल स्तरीय कई शोध कार्य संपन्न हो रहे हैं। आज के शोधार्थियों के प्रति आपका क्या नजरिया है?

नसिरा शर्मा : स्तर तो गिरा है इसमें कोई शक नहीं है। पहले जो शोध विद्यार्थी थे उन में लगन और अपना एक दृष्टिकोण होता था जिसका समर्थन उनके गाइड करते थे धीरे–धीरे सब कुछ स्त्री विमर्श के दायरे से सिमटता चला गया जिसमें ज्यादा मेहनत नहीं करनी पड़ती और दूसरी थेसिसों और लेखों और खुद के अन्दर के गुबार को निकाल शोध–पत्र लेखक के साक्षात्कार के साथ तैयार हो जाता है यदि विद्यार्थी नया विषय या नए दृष्टिकोण से शोध–पत्र लिखना चाहे तो अकसर उसके गाइड उसके लिए दिक्कतें पैदा कर देते हैं तो भी यह कह सकती हूँ कि कुछ गाइड और विद्यार्थी बहुत दिल से बहुत मेहनत से काम करते और करवाते हैं। लेखक को बहुत सुकून मिलता है जब उसका लेखन दूसरों की नज्ारों में क्या है और उसमें से क्या निकाला गया जो स्वयं लेखक की आँखों से ओझल था। पी.एच.डी. जरूरी बना कर टीचर बनने से पहले विद्यार्थी कुछ पढ़ और लिख लेता है मगर हर टीचर जरूरी नहीं है कि वह शोध भी बढ़िया करे यदि उसकी

रूचि नहीं है, बेहतर है कि एक अच्छा निष्ठावान अध्यापक बने।

राजेश पटेल : एक मुस्लिम परिवेश में पली बढ़ी बालिका के मन में अनायास हिन्दू परिवार से जुड़ने की क्या इच्छा जागृत हुई ..... जिसने जीवन के समस्त विरोधों व विसंगतियों की परवाह न करते हुए यह सब स्वीकार किया। जिसने जाति, धर्म व संप्रदाय से ऊपर उठा कर अपने मंतव्य व गंतव्य की ओर अग्रसर होने के लिए आपको प्रेरित किया ?

नसिरा शर्मा : इत्तफाक है और इस से ज्यादा क्या कह सकती हूँ। रहा हिन्दू–मुस्लिम घराना तो हम दोनों उस दायरे से ऊपर उठ चुके थे। हम दो धर्म या दो समाज, की तरह नहीं मर्द–औरत की तरह भारतीय समाज में अपने मानवीय सरोकारों की तरह रहे। हमारे घरों में हमारी इज्ज़ात भी हुई और प्यार भी मिला।

राजेश पटेल : नासिरा जी, आप का लालन–पालन मुस्लिम परिवार में हुआ और शेष जीवन यापन हिंदू परिवार में... दोनों में आप क्या समानता अथवा असमानता या विपरीतता पाती हैं...... और किस प्रकार इससे आपका लेखन प्रभावित होता है ?

नसिरा शर्मा : हम जरूर मुस्लिम परिवार में पैदा हुए मगर भारतीय परिवेश में पैदा हुए जिसका समाज भाँति–भाँति के धर्म, जात–पात, नस्ल और रीति–रिवाजों व मान्यताओं से बना है। हमारे घरों की कैफियत बंद दरवाज़ो या इकहरी नहीं रही। गाँव की जमीनों पर काम करने वाले हलवाहे, बागों के रखवाले, घरों में अनाज की सफाई करने वाले लोग अलग–अलग जात, धर्म और आस–पास के गाँव के भी रहे हैं। जिन्हें हमारे घरों में कोई न कोई रिश्तों के नाम के साथ बच्चे जोड़ देते थे और बड़े उन्हें नाम से पुकारते थे जिस से नई पीढ़ी के कान और आँखें इनको बेगाना नहीं अपना समझते थे और उन से अवधी भाषा में बोलते थे जिसमें उर्दू–हिन्दी के शब्द अपनी सुन्दर सजावट के साथ मौजूद रहते थे। शादियों और अन्य समारोहों में वेज व नॉनवेज का बाकायदा इंतज़ाम होता था। एक सम्मान व प्यार का रिश्ता था। घर के मुशायरों और महफिलों में हिन्दू शायर भी शिरकत करते थे और उर्दू के रसिया भी। वहाँ भी न कोई भेदभाव था न अलगाव का अहसास! ऐसे खुले माहौल में जीने वाला लेखक वही लिखेगा जिस माहौल में उसकी परवरिश हुई। सांझी भारतीय संस्कृति जो मेरे लेखन में बड़े सहज भाव से

उभरती हैं। और मेरे लेखन को जिन्दगी की, खासकर भारतीय समाज की धड़कन देती है।

सवाल का दूसरा हिस्सा ब्राह्मण से विवाह और ससुराल के कायदे कानून तो जवाब है मेरे सरोकारों, संस्कार ओर विचार का विस्तार हुआ। बंदिशें नहीं थीं। ससुराल के माहौल में राजस्थान (अजमेर) में ज़्यादा रह नहीं पाई। उसका कारण था कि माँ यानी मेरी सास शादी के चन्द साल बाद गुजर गई और सभी बहन–भाई नौकरी के हिसाब से अन्य नगरों में बस गए जिनसे सम्पर्क और मिलना–मिलाना बना है। ईद, बखरीद, नया साल, होली–दिवाली में हम एक दूसरे को मुबारकबाद देना नहीं भूलते हैं। मेरे मायके में धार्मिक जकड़न नहीं थी खुद प्रो. शर्मा नें धर्म को लेकर कर्मकांड या मंदिर जाना जैसी कोई पाबन्दी न थी। वह धर्म पर बात नहीं करते थे। हमारे बीच यू.पी. और राजस्थान को लेकर न रिश्तेदारों को लेकर कभी मज़ााक या कटाक्ष हुआ। हमने इन्सानी रिश्तों पर यकीन रखा और एक नई तरह की बुनियाद घर की डाली जिस में कोई बंद दरवाजा नहीं रखा।

अब सवाल के तीसरे हिस्से का जवाब है इंसानियत, शराफत, शिक्षा, रिश्तों का सम्मान, किसी भी तरह की जड़ता या संकीर्णता का न होना यह हमारी समानता रही है। लेकिन मेरे लेखन में पानी की समस्या को लेकर लिखे उपन्यास 'कुंइयाजान' में राजस्थान के गाँव का हाल उभर कर आया जहाँ मैं गई और लोगों से मिली उनसे बातें की। वह हिस्सा उपन्यास का बेहद सुन्दर और हिला देने वाला है। मेरा ध्यान राजस्थान की तरफ जाता भी नहीं अगर प्रो. शर्मा के जरिए उनके बचपन में पानी की कमी का जिक्र न सुनती।

राजेश पटेल : दो संस्कृतियों के मध्य के सामंजस्य में कौन सी ऐसी समस्याएं व अनुकूलताएं थीं जिन्हें आप सकारात्मक मान सदैव अपने गंतव्य की ओर अग्रसर होती रहीं ? और क्या कुछ नकारात्मक भी ?

नसिरा शर्मा : सच पूछें मैंने दो संस्कृतियों को गंगा–जमुनी संस्कृति के रूप में जिया है। उसी नजरिए से अपने मायके व ससुराल को देखा। उस में न टकराहट थी न ही कसैलापन मगर एक बात जो मैं अपने आत्मतर्पण'वह एक कुमारबाज थी' में लिख गई थी वह वास्तव में मेरा सच है अगर मैं यह शादी न करती तो आधा हिन्दुस्तान ही जी पाती। संवाद में कलम से जुम्ला निकल पड़ा था

मगर आप जितने भी खुले दिमाग और दूसरे समुदायों के दोस्त रखते हों मगर इस तरह के रिश्ते एक अलग तरह की मधुरता लाती है अब रहा सवाल लेखन पर प्रभाव क्या रहा तो उसका जवाब है जब कलम हाथ में आता है तो सृजन अपना काम करता है वह चरित्रों को समाज से उठाता है हिन्दू–मुस्लिम समझ कर नहीं बल्कि इन्सान समझ कर उसके दुःख सुख की बात करता है।

राजेश पटेल : लघु कथा से कहानीय कहानी से लघु उपन्यास और लघु उपन्यास से वृहद उपन्यास तक की कथा–यात्रा के विस्तारण के पीछे का रसायनशास्त्र क्या है? क्यों कोई रचना लघु कथा में समा जाती है, कोई कहानी में, कोई लघु उपन्यास में... और कोई वृहद उपन्यास में भी समाये, नहीं समाती.... इस बारे में विस्तार से बताने का कष्ट करें।

नसिरा शर्मा : मैं समझती हूँ सब कुछ विषय पर आधारित है। विषय का चयन ही लेखक को महसूस करा देता है कि विस्तार और फैलाव के लिए इसमें कितनी गुँजाइश मौजूद है। मैंने 'अक्षयवट' में शहर इलाहाबाद को मुख्यपात्र के रूप में लिया जिसके चार चरित्रों को उठाया या कहूँ उन असमाजिक तत्वों के रूप में उन शक्तियों को उठाया जो सफेद लिबास में अत्याचार, भ्रष्टाचार और कानून को खिलौने की तरह इस्तेमाल करते हैं पहला भ्रष्ट पुलिस, दूसरा जालसाज वकील, तीसरा, अराजक गुंडे, चौथा बगुला भगत नेता। यह स्तम्भ मेरे उपन्यास में आम आदमी की जिन्दगी में किस तरह का हस्तक्षेप करते हैं और न्याय करने वाले भी परेशान हो उठते हैं। अपने ही विभाग के चन्द लोगों के चलते पूरी तरह बदनामी का ठीकरा उन्हीं पर टूटता हैं इसमें बेकार मगर पढ़े लिखे लड़कों का संघर्ष है। मोहल्ले और गलियाँ जिनके अलग–अलग चरित्र हैं। यह लघु उपन्यास या कहानी में अपनी बात कह सकती थी मगर पूरा शहर न उठा पाती। इसी तरह 'कुइयाँजान' है जो इलाहाबाद से राजस्थान, पटना, गाँव, कस्बा से लेकर विदेश तक जल की समस्या को लेकर चलता है यह भी कई सौ पेज का उपन्यास है जैसे परिजात जो इलाहाबाद – लखनऊ को लेकर चला है मगर उस में विदेश की धरती का ब्यान है मगर 'जिन्दा मुहावरे' बटवारे के 45 वर्ष बाद लिखा मेरा उपन्यास है जो सिर्फ डेढ़ सौ पेज का है। जिस में हिन्द व पाक के बीच के रिश्तों के साथ मानसिकता भी उभरी हैं जिस तरह 'अजनबी जजीरा' या 'दूसरी जन्नत' 'अल्फा–बीटा–गामा' यह

सवा सौ पेज पर खत्म हो जाते हैं। मेरी कुछ कहानियाँ 20–25 पेज की हैं और कुछ दस और कुछ केवल एक पन्ने या आधे पन्ने पर अपनी बात कह जाती हैं। मेरा पहला उपन्यास 'बहिश्ते ज़ाहरा' (सात नदियाँ एक समन्दर) तो हज़्ाार पेज का बन सकता था यदि मैं आज लिखती। ईरान की क्रान्ति पर लिखा वह उपन्यास समय का दस्तावेज तो है जो चाह कर भी अब वह सब नहीं लिख सकती है क्योंकि उस समय की मैं गवाह रही हूँ और अब दूर बैठ कर वह सारे 35–40 वर्षों को खबरों, दूसरों के लिए बयानों से उठाती तो उस की भाषा व आभिव्यक्ति अलग तरह से उभरती। वैसे कहा जाता है कि यादों से निकल कर जो चीज़ों लिखी जाती है उसका रंग कुछ और ही होता है। मगर वक्त को शब्दों में कैद करना भी एक अहम काम होता है।

राजेश पटेल : आप अपनी नायिकाओं का चयन समाज की किस तबके से और कैसे उठाती हैं ? अपनी कथा यात्रा में या अपने साहित्य में आप नारी को किस रूप में चित्रित करना चाहती हैं?

नसिरा शर्मा : जब शुरु में लिखना आरम्भ किया था तो तय किया था कि औरत की छबि कभी भी नकारात्मक नहीं दिखाँऊगी और हमेशा उस का एक विशिष्ठ स्थान रहेगा। वही चरित्र उठाऊँगी जो स्वाभिमानी, गलत बात पर न झुकने वाली, जुल्म के खिलाफ मुंह खोलने वाली मगर जैसे–जैसे अनुभव का दायरा बढ़ता गया भ्रम टूटता रहा कि औरत भी षडयंत्री, प्रतिक्रियावादी, अत्याचारी, विष घोलने वाली होती हैं जो भोली भाली क्षमाशील बड़े दिल वाली औरतों को ही नहीं बल्कि मर्दों को चकमा देने वाली भी होती हैं चाहे वह संख्या में कम हो या पर्दा दर पर्दा अपनी हरकतें मिठास का लबादा पहन अंजाम देती हैं आखिर वह भी तो इंसान है अपनी अच्छाई और बुराई के साथ, तो फैसले की घड़ी थी कि क्या उन्हें भी सामने लाया जाए ? लेकिन कलम हमेशा उन औरतों के पक्ष में उठा जिनको जरूरत थी कि उन चरित्रों द्वारा समाज की रूढ़ीवादिता, संकीर्णता और औरतों पर होने वाले जुल्म को उजागर किया जाए मगर एक वक्त ऐसा आया कि मैं उन औरतों के किरदार भी उठाने लगी। अब रहा मेरी चाहत का सवाल तो मैं चाहूँगी कि लड़कियाँ क्रान्तिकारी बने, परंतु आधी क्रान्तिकारी नहीं। अधिकारों व कर्तव्यों के प्रति सचेत रहें खासकर मानव अधिकार की कल्पना को केवल अपने तक न समेटे बल्कि

रिश्तों की समझ और अहमियत को समझें। कदम ऐसा उठाएं जो समाज को बदलाव की तरफ ले जाए और यह काम धीरे–धीरे होता है शगूफा छोड़ने से नहीं। अब रहा मेरा सपना तो मैं चाहूंगी हर औरत को उसका सपना पूरा करने का मौका मिले वह नासिरा शर्मा से बेहतर से बेहतर बने।

राजेश पटेल : आप एक सफल लेखिका के साथ–साथ एक सफल माँ, गृहणीय, बहन, पत्नी आदि अनेकानेक अन्य संबंधों की भूमिकाओं का भी सफल निर्वहन करती रहीं, लेकिन आपको एक स्तरीय लखिका बनाने में आपके परिवार की क्या भूमिका रही?

नसिरा शर्मा : बेहद खूबसूरत और बेहतरीन भावनाओं के साथ मैं शुक्रिया अदा करती रही हूँ और करती हूँ। मुझे लेखन की स्वतंत्रता, यात्राओं की आजादी बोलने पर अंकुश नहीं। संक्षेप में मेरे लेखक को आदर और सम्मान के साथ हर तरह की सहूलियत मिली जिस में मेरे बच्चे भी शामिल हैं। लेकिन साथ ही जहाँ यह माहौल मिला वहीं मेरे प्रोफेसर शौहर ने फैमली के लिए कुर्बानी भी दी। जब वह शिलाँग में भूगोल विभाग की स्थापना कर रहे थे तब हम लोग तीन साल दिल्ली में रहे। मेरा फारसी में पांच वर्ष की एम.ए. की पढ़ाई और एयरफोर्स स्कूल में बच्चे पढ़ रहे थे। उस समय प्रोफेसर शर्मा डीन और प्रोफेसर की पोजिशन पर थे। उन्हें लगा यदि वह सिर्फ अपना कैरियर की ऊँचाईयां देखेंगे तो हम सबको एक अलग तरह के इलाके में बाकी जिन्दगी गुजारनी पड़ेगी। विभाग स्थापित हो चुका था। कोर्स बन चुका था। वह अपनी जिम्मेदारी पूरी करके जे.एन.यू. में अपने पुरानी पोजिशन 'रीडर' की पोस्ट पर वापस आ गए। कुछ दिन वह मिस करते रहे मगर कभी हम को इस बात का अहसास नहीं दिलाया। मैं आज जो भी हूँ अपने परिवार से मिले प्यार, सम्मान और सहयोग के कारण हूँ जहाँ हमने बच्चों को बेपनाह प्यार दिया और दोस्तों के साथ दोस्ती निभाई। जब जिसने चाहा हमने गैरों की भी मदद की अगर वह हमारे बस में होती थी।

राजेश पटेल : आपका लेखन दो संस्कृतियों का सेतु है । दोनों संस्कृतियों को अपने करीब से देखा–भाला है... इसमें आपको किस संस्कृति का चित्रण करने में अधिक सुखद अनुभूति होती है और क्यों ?

नसिरा शर्मा : मैं पूरे भारतीय परिवेश से अपनी कहानी उठाती हूँ। मेरे लिए

कोई विशेष वर्ग, धर्म या जेंडर अहम नहीं है। मैं परिधियों को तोड़ती हूँ मिसाल के तौर पर आप 'शाल्मली' और 'ठीकरे की मंगनी' या फिर शब्द 'पखेरु' और 'दूसरी जन्नत' को समाने रख सकते हैं जो परिवेश, भाषा–शैली में एक दूसरे से अलग हैं। मगर उस में एकाकी माहौल नहीं बल्कि साझा समाज उभरता है। मेरी ढेरों कहानियाँ भी इसी तरह से है चाहे वह 'इब्ने मरियम' हो या फिर 'चार बहने शीशमहल' की या 'सबीना के चालिस चोर' हो या फिर 'सरहद के इस पार' हो। लेकिन एक बात जरूर कहना चाहूँगी कि जिनको 'शाल्मली' पसन्द आई उन्हें 'ठीकरे की मंगनी' उतना प्रभावित नहीं कर पाई या जो 'ठीकरे की मंगनी के दीवानें हुए वह शाल्मली को पसन्द नहीं कर पाए मगर कुछ ऐसे उपन्यास मेरे हैं जो हर पाठक की पसंद बने उसमें कोई बटवारा न था जैसे 'जिन्दा मुहावरे' 'कुइयाँजान', 'बहिश्ते जहरा' (सात नदियाँ एक समन्दर) 'परिजात' इत्यादि। रहा पाठकों को अपनी दौलत समझना तो यह मेरा ही कहा जुम्ला है। हिन्दी के लेखन को पसन्द करने वाले हिन्दी पाठक हैं जिनकी प्रेरणा और प्यार बराबर मिलता रहा, हाँ जो रचनाएँ उर्दू में आईं उन्हें उर्दू वालों ने बड़े चाव से पढ़ा। हिन्दी–उर्दू के बीच सेतू की तरह वह पाठक भी हैं जो हिन्दी–उर्दू जानने वाले हैं। वह हिन्दी में छपी मेरी रचना पढ़ते हैं दिल चाहा तो उर्दू में अनुवाद भी कर देते हैं।

राजेश पटेल : नासिरा जी, आप लेखिका के साथ–साथ स्वयं एक प्रबुद्ध स्त्री हैं.... अपने लेखन में आपने स्त्री को किस रूप में उकेरना चाहा है ? आपके स्त्री पात्रों में क्या विशेषता है जो आपके लेखन, चिंतन व आपको अन्यों से पृथक करती है ?

नसिरा शर्मा : मेरी ख्वाहिश है कि औरतें अपनी लड़ाई का कैनवास बड़ा करें। अभी तक हम बेसिक लड़ाइयों में फंसे हुए हैं क्योंकि अधिकतर न समाज की सोच न मर्द का नजरिया औरत को लेकर बदला है जो थोड़ी बहुत तब्दीली आई है या तो वह मंचों और भाषणों तक सीमित होकर रह गई है या फिर वह तब्दीली एक जगह पर उसे स्वतंत्रता देती है मगर अगले कदम पर रोड़े अटका देती है जिस से वह पुरुष भी परेशान हो उठते हैं जो वास्तव में औरतों की मदद करना चाहते हैं मगर समाजी जकड़न जिस में जड़ सोच के मर्द–औरत दोनों शामिल रहते हैं वह न अपनी सत्ता छोड़ना चाहते हैं न खुद को बदलना चाहते हैं। जहाँ–जहाँ औरतें

एकजुट होकर अपने अधिकारों के लिए लड़ी है वहाँ उन्होंने लड़ाई जीती हैं। चाहे चिपको आन्दोलन हो या नशाबन्दी या मजदूरी बढ़ाने जैसे मुद्दे हों का असर तो हुआ मगर जहाँ वह आपस में लड़ती हैं वहाँ वह कमज़ोर पड़ जाती हैं। ज़्यादातर शिक्षित औरतें एवं अधिकारों के प्रति जागरूक औरतें, अपना बुनियादी अधिकार चाहती हैं जहाँ उन्हें काम करने की आजादी हो और बराबरी की मानवीय हिस्सेदारी हो, वह जब नहीं मिलती तो घर टूटते हैं और जिसका असर बच्चों पर पड़ता है। कहीं कहीं पर कमाने की आजादी मिलती है मगर सिर्फ वहीं तक जहाँ तक घर वाले चाहते हैं। इन बातों की प्रतिक्रिया जो उभरती हैं वह मर्द विरोधी रूप में सामने आती हैं और औरत की सारी इनर्जी खा जाती है। कमाने और तरक्की के बावजूद वह अकेली पड़ जाती है। हिन्दुस्तान एक बड़ा देश है जात–पात धर्म, रीति रिवाज अलग अलग प्रान्तों और वर्गों के हिसाब से हैं जिनकी परेशानियाँ भी तरह तरह की है। हर औरत व लड़की का सपना भी उसी की पसन्द और हालात से निकलता है जो दूसरी महिला से जुदा हो सकता है मगर बुनियादी ज़रूरतें व प्यार–सम्मान तो हर इन्सान का अधिकर है उस में मर्द–औरत में भेद करना उचित नहीं समझती हूँ। यह तो मैं नहीं बता सकती हूँ कि मेरा लेखन मुझे दूसरों से किस रूप में पृथक करता है मगर यह बात बहुत से लेखकों, पत्रकारों और पाठकों का भी कहना है। रहा विचार और सम्वेदना को लेकर तो मैं कभी एक पक्ष, एक नजरिए, अपने व्यक्तिगत अनुभवों को कुंठित अभिव्यक्ति या आक्रोश को अपने लेखन में नहीं उतराती हूँ मेरा तेवर, मेरा क्रोध, मेरा दुःख दरअसल अन्याय और उस सामाजिक जकड़न व जड़ता के विरुद्ध उमड़ता है जो मैं सहन नहीं करती हूँ। मगर कभी अपने फफोले नहीं फोड़ती हूँ।

राजेश पटेल : आप अपने कथा संसार के पात्रों का चयन मानवता के किस तबके से करती हैं ? पुरुष और स्त्रियों दोनों की तुलना में आप किसको सबल देखना चाहती हैं ?

नसिरा शर्मा : जहाँ जुल्म और अन्याय है वहाँ मैं हूँ चाहे वह किसी वर्ग का हो? दोनों इन्सानों के दो रूप हैं जिनमें पक्षपात की मैं कायल नहीं हूँ। कुछ तो मेरे नज़रिए और पसन्द न पसन्द का अक्स झलकता होगा मगर मैं लेखन में अपने को थोपने से बचती हूँ और उस किरदार की सोच और सम्वेदना को पकड़ने की

ज़्यादा कोशिश करती हूँ। हिन्दी में औरत–मर्द सम्बन्धों पर बहुत लिखा गया है। मगर ज़्यादातर लेखन शिकवे–शिकायत और अत्याचार से भरे एडोलेसंट पीरियड की कोरी भावुकता से लिखे गए हैं जो इकहरापन लिए हैं जहां बयान करने वाला अपने को मासूम पेश करता है। अभी हम रिश्तों को लेकर बालिग नहीं हो पाए हैं और परिपक्वता जो आनी चाहिए वह ज़्यादातर गायब नज़ार आती हैं चाहे वह जितना भी पढ़ा लिखा और अपने कार्यक्षेत्र में दक्ष हो। इस से एक दूसरे को समझने की जगह एक दूसरे को अपनी तरह बदलने की कोशिश होने लगती है। दो लोग दो अलग अलग घर में पले एक तरह से कैसे व्यवहार कर सकते हैं उस के लिए समय चाहिए जबकि घर में साथ पलने वाले बच्चे भी एक दूसरे से अलग व्यवहार आदत व सोच वाले होते हैं। जिन्दगी की कौन–सी खुशियाँ आपको मिलने वाली हैं आपको पता नहीं होता है जब तक आप उस रिश्ते को जीते नहीं हैं। मगर कहीं कहीं बहुत बेजोड़ शादियाँ हो जाती हैं और प्रताड़ना व अत्याचार होता है वहाँ रिश्तों में ज़ाबरदस्ती का पेवन्द लगाने की जगह अलग हो जाना ही बेहतर है। रहा मेरी सोच तो वह मैंने उपन्यास 'शाल्मली' और 'ठीकरे की मंगनी' में व्यक्त की है 'औरत के लिए औरत' और 'औरत की आवाज' और 'औरत की दुनिया' लेखों के संग्रह व साक्षात्कारों में व्यक्त की हैं फिर भी संक्षेप में इतना कहूँगी कि मर्द–औरत को अपनी तरह फलने–फूलने और खिलने का मौका दे और इन्सानी अधिकारों के साथ उसको जीने दे।

राजेश पटेल : आपको अपनी कौन सी नायिकाएं अच्छी लगती हैं..... हिंदू पृष्ठभूमि से ताल्लुक रखने वाली अथवा मुस्लिम पृष्ठभूमि की ?

नसिरा शर्मा : ऐसा भेदभाव लेखक व पाठक के मन में रहता नहीं है खासकर उर्दू जानने वालों के मन में क्योंकि उर्दू को आगे बढ़ाने और लिखने वाले दूसरे धर्मों से रहे हैं। जिनके किरदार, परिवेश हमें उन से हमदर्दी और प्यार करना सिखाते हैं जैसे प्रेमचन्द, राजेन्द्र सिंह बेदी, रामलाल, कृष्णचन्दर, इत्यादि उसके अलावा ख्वाजा अहमद अब्बास, कर्रातुलएन हैदर, रजिया सज्जाद जहीर इसी तरह नए उर्दू के लेखक अपने पात्र हिन्दू, ईसाई, दक्षिण भारत के उठाते हैं तो मैं उसी गंगा–जमुनी सांस्कृतिक की पैदावार हूँ मेरे यहाँ 'ततइया' कहानी भी है जहाँ पत्तल बनाने वाली बारिन की कहानी है– तो 'इमाम साहब' मस्जिद में नमाज पढ़ाने वाले

हैं। असली बात यह है कि आपने जिया क्या है? उस पर आपकी पकड़ कितनी है? उस समाज को कितना जानते–समझते हैं ? सिर्फ नामरख कर आप उखड़ा उखड़ा चरित्र केवल दिखाने के लिए गढ़ते हैं तो वह बेहद बनाउटी लगता है। मेरे उपन्यास 'शाल्मली' को बिहार भाषा परिषद का 'महादेवी' पुरस्कार मिला और जब अरसे बाद वह उर्दू में छपा तो उसे न सिर्फ दिल्ली–उर्दू बल्कि बिहार उर्दू अकादमी का पुरस्कार मिला। इसका साफ मतलब है उर्दू के लिखने वालों के लिए अच्छा लेखक और उत्कृष्ट साहित्य का महत्व है न कि धर्म, नाम या जातपात का। पाठकों द्वारा तीन तरह की अभिव्यक्तियाँ मिलती हैं पहली कुछ पाठकों व लेखकों को मेरी मुस्लिम परिवेश की कहानियाँ ज्यादा भाती हैं और कुछ मेरी दोनों तरह की और कुछ तो यह भी कह देते हैं कि आप केवल विदेशी परिवेश कहानियाँ लिखिए, बाकी तो सब लिख रहे हैं। मैं सरहदों को नहीं पहचानती मुझे जहाँ इंसान मेरी सृजनशीलता का शीशा चिटखा देता है वहीं से मेरी कहानी जन्म ले लेती है। लेकिन मैंने जिन पात्रों और परिवेश को जिया है उसी पर मेरी पकड़ सधती है बिलावजहा मैं दूर की कौड़ी नहीं ला पाती हूँ।

राजेश पटेल : प्रायः कहा जाता है कि एक रचनाकार के सृजन के लिए भूगोल और इतिहास की दृष्टि से परिसीमित पृष्ठभूमि ही पर्याप्त है .... लेकिन आपने सरहदों के भीतर न रहकर सरहदों के पार जाकर अपने साहित्य के लिए जमीन तलाशी .... क्या भारतवर्ष में ऐसी ज्वलंत समस्याएं अथवा हृदय को हिला हिला देने वाली संवेदनाएं नहीं बची थीं कि आपको इसके लिए कहीं और भटकना पड़ा .... इस पर आप क्या तर्क देना चाहेंगी ?

नसिरा शर्मा : मैं कहीं भटकने नहीं गई थी न अनुभव करने गई थी न भारत में मेरे लिए कोई कमी थी जो जहाँ जरूरी लगा अपने समय के प्रति जवाबदेही और जिम्मेदारी महसूस की वह विषय उठाया। कुछ लेखक चाहते हैं कि वह अपने परिवेश की गहरी पड़ताल करें उसे ही अपने लेखन का आधार बनाएँ तो वह आजाद हैं। साहित्य आप से कुछ नये की उम्मीद करता है कला चाहती है कि कुछ नया जुड़े, कोई दोहराव नहीं पसंद करता है। पारखी आँखें उथलेपन को ताड़ लेती हैं इसलिए चलते फिरते आप का जो दिल में आया लिख दिया और कहा कि यह सच्चा किस्सा था मेरी आँखों ने देखा था मगर वह सम्वेदनाओं को सही तरह से

चित्रित नहीं कर पाते हैं लेखन या सृजन कुछ भी घसीट देने का नाम नहीं है। इलाहाबाद को मुझे खंगालना था अपने अंदाज में मैंने चार उपन्यास एक कहानी संग्रह लिखा मगर मुझ से पहले भारती जी, कमलेश्वर जी और न जाने कितने रचनाकारों ने उस पर लिखा अभी नए लेखकों में बालेन्दू द्विवेदी का उपन्यास 'वाया फुरसतगंज' बिल्कुल नए कोण से इलाहाबाद को उठाया है वह भी उस समाज और शहर की सच्चाई है। अगर में अपनी जन्मभूमि पर न लिखती तो बेशक आप यह कह सकते थे मगर मेरे लेखन के कैनवास का विस्तार हुआ है मूल रूप से वेदना की वही सरिता मेरी भारतीय कहानियों में बहती है जो विदेशी परिवेश के अन्य उपन्यासों व कहानियों में बहती हैं।

राजेश पटेल : आपका, लेखक के साथ–साथ एक पत्रकार का व्यक्तित्व भी है ...... इन दोनों में आप सामंजस्य किस प्रकार बिठाकर चलतीं रहीं ?

नसिरा शर्मा : इराक से बुलावा जब भी आया एक पत्रकार के रूप में आया मगर ईरान की पहली यात्रा को छोड़कर तीन बार मैं अपने खर्चे पर गई। जो थी तो 'शाहनामाय को लेकर मगर ईरान–क्रांति को देखा तो तीसरे चौथी यात्रा में वीजा तो लेखक व शोधकर्ता के नाम पर मिला मगर वहाँ प्रेस कार्ड बनवाना पड़ा क्योंकि उसके बिना मैं इन्टरव्यू लेने और प्रेस–कॉनफ्रेंस में शिरकत नहीं कर सकती थी। पाकिस्तान एक बार नई दुनिया उर्दू समाचार पत्र की तरफ से पत्रकार वीजा पर राष्ट्रपति जियाउलहक के फियूनरल को कवर करने गई थी। दूसरी बार मुजाहिद्दीनों से इन्टरव्यू लेने 'सुब–ए–सरहद' की ओर अपने खर्चे पर गई। सीरिया तो साहित्य अकादमी की तरफ से गई थी। यहाँ पर खुलकर विवरण इसलिए दिया कि अफगानिस्तान में तो इतना नहीं मगर ईरान उस समय पत्रकारिता व पत्रकारों को विशेषकर विदेशी पत्रकारों को लेकर बहुत सावधानी और शंकित था इसलिए मैंने अपने को किसी से न जोड़ कर फ्रीलानसिंग पत्रकार ही रखना उचित समझा जिस से मुझे दिक्कतों के बावजूद काम करने का मौका मिलता रहा। मैं पहले भी कई बार यह बात कह चुकी हूँ कि जो मैंने चाहा वह मुझे नहीं मिला। तेहरान विश्वविद्यालय में दाखिला मिलने के बावजूद मैं न जा सकी क्योंकि क्रांति में विश्वविद्यालय बन्द और वह एक तरह का सियासी ग्राउन्ड बन चुका था जहाँ भाषण और सामूहिक नमाजें जनता की एकता को दर्शाने के लिए 60,000 या

80,000 मर्द औरतों की हर जुमे को होती थी। लेकिन जो मैंने नहीं सोचा, न ही इच्छा की उसके दरवाजे जिन्दगी मेरे लिए खोलती गई कि उधर नहीं इधर आओ। मैं इसको एक इत्तफाक कहूँगी। अब रहा सवाल कि मुझे एक सशक्त कथावस्तु की तलाश के लिए मुझे विदेश जाना पड़ा। ऐसा नहीं रहा। मेरे उपन्यास और कहानियाँ जो सियासत से उपजी इंसानी तकलीफों से भरी आई हैं वह बहुत बाद में आई है मगर मानवीय सरोकारों व इन्सानी रिश्तों पर लिखा मेरा पहला कहानी संग्रह 'शामी कागज' पहली ईरान यात्रा के बाद लिखी कहानियों का आया और बाद में भारतीय परिवेश पर लिखा दूसरा कहानी संग्रह 'पत्थर गली' आया। रहा पत्रकारिता और सर्जन में तालमेल बिठाने का तो एक रचनाकार को तय करना पड़ता है और एक समझ भी आ जाती है कि हर घटना कहानी नहीं बन पाती और न हर दुख रिर्पोटिंग में या लेख के लिए उपयुक्त हो सकता है।

राजेश पटेल : आपका कथा–विन्यास चाहे वह कहानी हो अथवा उपन्यास, इसकी संरचना में आप किन–किन बिंदुओं का विशेष रूप से क्या सोच रखती हैं ?

नसिरा शर्मा : परिवेश का उभरना मैं जरूरी समझती हूँ। जिस में प्रकृति हो इन्सानों के साथ पशु–पक्षी भी किसी न किसी बहाने ले आती हूँ। दरख्त, धूप, आसमान, परिन्दे और आवाजों के उतार–चढ़ाव को अपने वर्णन में लाना मुझे अच्छा लगता है। खाने व पकवानों का जिक्र करना मैं जरूरी समझती हूँ उस से बहुत कुछ कहे बिना चरित्र की आर्थिक स्थितियों और भूगौलिक वातावरण उभर आता है। किसी भी घर की रौनक उसकी रसोई घर होता है भले ही ड्राईंगरूम बहुत सजा हुआ हो मगर बघार की आवाज, छौंक की खुशबू, भूनने की महक घर के बाहर तक तैर जाती है। बहुत सी चीज़ो, अपने आप उभर कर आने लगती है जिसमें मौसम भी अपनी भूमिका निभाता है। निर्वाह में संतुलन रखना पड़ता है गैरजरूरी विस्तार उबा देता है कभी कभी संकेत ही दृश्य उभारने के लिए पाठक के लिए काफी होता है। कभी कभी चन्द पंक्तियाँ ही घटना की गम्भीरता को समझने में सफल हो जाती हैं। भाषा बोझिल और लच्छेदार बनाने की चाह में लेखक कहना क्या चाह रहा है वह उलझ कर रह जाता है जिस से मैं बचती हूँ। उचित शब्दों का संवाद के लिए चयन करने में भी समय लगाती हूँ।

राजेश पटेल : आपको अपनी बाल कहानियों की कौन सी नायिकाएं अच्छी लगती हैं.... हिंदू पृष्ठभूमि से ताल्लुख रखने वाली अथवा मुस्लिम पृष्ठभूमि की ?

नसिरा शर्मा : मेरे दिमाग में धर्म हर समय सवार नहीं रहता है। उस का अपना एक मुकाम और भूमिका है। बहुत से लेखक हिन्दू–मुस्लमान साहित्य में जरूर करते होंगे तभी आपने पूछा है वरना इंसान के वजूद के बहुत बाद धर्म वजूद में आया है तो मेरा रिश्ता इंसान से बहुत पुराना है। उसी रिश्ते से मैं बच्चों को भी देखती हूँ। मुझे अस्सी के दशक में जब जामिया में पढ़ा रही थी तो वायसचान्सलर किदवई साहब ने कहा कि तुम अपनी उर्दू कहानियाँ 'मकतब–ए–जामिया' में छपवाओं मैं खुद उन्हें फोन करूँगा। मैंने बच्चों की हिन्दी कहानियाँ उर्दू लिपि में कीं और कुछ उूर्द की बाल पत्रिका में छपी कहानियों की पाण्डूलिपि लेकर प्रकाशक के पास पहुँची, वह कहानी पढ़ते रहे। पसन्द आईं फिर कहने लगे आपको कुछ नाम बदलने होंगे जैसे जोजफ की जगह जफर या कोई और नाम। सुनकर मैंने कहा कि कहानी तो शिलोंग की है जहाँ खासी आदिवासी है। जो ईसाई धर्म के है वहाँ पर तो कहानी जफर नाम अपना असर गुम कर देगी। उनका जवाब था कि हमारे बच्चे इस नाम से....मैंने जवाब दिया कि यह तो हिन्दुस्तान है उन्हें मालूम होना चाहिए कि उनके मुल्क में और कौन कौन कहाँ–कहाँ किस नाम से रहता है। बहरहाल पाण्डुलिपि मैं वापस ले आई क्योंकि यह उनकी व्यक्तिगत सोच थी भारतीय मुस्लमानों की सोच नहीं थी क्योंकि उर्दू का आधा अदब तरह तरह के नामों से भरा पड़ा है और उर्दू में यह तास्सुब नहीं था। बहरहाल प्रकाशक की नजर बाजार पर रहती है उसकी अपनी मजबूरी हो सकती है। मगर एक लेखक के लिए ऐसी जड़ता व सर्कीणता मुझे पसन्द नहीं है।

राजेश पटेल : आपने अपने बाल साहित्य में किन समस्याओं को उजागर करने का प्रयास किया है और किस समाज अथवा तबके के बच्चों ने आपको अधिक लिखने के लिए वैचारिक आयाम प्रस्तुत किए हैं इन सब में आपका अपना बचपन कहां तक सुरक्षित रहा है ?

नसिरा शर्मा : मेरे बाल चरित्र में निम्न व मध्यवर्ग के बच्चे ज्यादा आए है जिन में रेगपिकर्स भी है, बाल मजदूर भी है। खोये और घर से भागे बच्चे भी है और स्कूल जाने वाले खाते–पीते घर वालों के भी बच्चे हैं मेरी कहानियों में बच्चों

के साथ पशु–पक्षी का भी जिक्र रहता है वह भी मेरे चरित्र का रूप भरते हैं। उस में मेरा बचपन मौजूद है क्योंकि मेरे अन्दर का बच्चा अभी बच्चा है।

मैंने बहुत कुछ करना चाहा था। एक से एक योजनाएँ दिमाग में आती थीं मगर बाल साहित्य को लेकर उस समय सम्भावनाएँ और अवसर नहीं थे। जब हुए तो मुझे मौका नहीं मिला क्योंकि मैं लेखन से जुड़ी थी। फिल्म लाइन या छोटे पर्दे से नहीं तो भी मेरी बाल कहानी 'माँ' पर टी.वी. फिल्म बनी। प्लेटफार्म 7 के नाम से एक पचास एपीसोड का रेडियो ड्रामा प्रसारित हुआ। कुछ और सिरियल बच्चों पर डी.डी. आकाशवाणी द्वारा बनाए गए थे। जामिया के मार्क्स कामुनिकेशन से बहुत शुरु में जुड़ी मगर वहाँ की जबरदस्त सियासत के आगे बात कुछ बन नहीं पाई। हर सपना पूरा होने का वायदा नहीं करता है।

निष्कर्ष–

हर भाषा को एक दूसरे की पूरक मानने वाली हिंदी की प्रख्यात लेखिका नासिरा शर्मा किसी भाषा को किसी एक खास धर्म से जोड़ने का पुरजोर विरोध करती हैं। उनका मानना है कि अदब की बात करने वाले हर जुबान से मोहब्बत करते हैं और यही वजह है कि उनकी रचनाओं के किरदार कभी 'ख्वाब' बुनते हैं तो कभी 'सपने' देखते हैं। नासिरा शर्मा को साल 2014 में प्रकाशित उनके उपन्यास 'कागज की नाव' के लिए वर्ष 2019 के 'व्यास सम्मान' से सम्मानित किया गया है। उनकी मातृभाषा उर्दू है, वह हिंदी में साहित्य रचना करती हैं और फारसी उनका विषय रहा इसलिए उन्हें सब भाषाएं अपनी अपनी सी लगती हैं। उनका मानना है कि सियासत ने उर्दू को एक खास मजबह से जोड़ दिया है वर्ना हिंदुओं ने मुसलमानों के मुकाबले उर्दू की कहीं ज्यादा खिदमत की है और हिंदी के बहुत से लेखकों की पृष्ठभूमि उर्दू ही रही है जिसकी वजह से उनकी रचनाओं की भाषा में एक अलग ही रवानगी है। अपने परिवार में लेखन के बारे में जानकारी देते हुए वह बताती हैं कि सांस लेने के सिलसिले की तरह परिवार में कलम चलाने की रवायत थी। उन्होंने तीसरी कक्षा में पढ़ने के दौरान पहली कहानी लिखी, जिसे बाकायदा सांत्वना पुरस्कार भी मिला। नासिरा शर्मा ने फारसी भाषा और साहित्य में एम. ए. किया है। हिन्दी उर्दू, अंग्रेजी, फारसी एवं पश्तो भाषाओं पर उनकी गहरी पकड़ है। वह ईरान, इराक और अफगानिस्तान के समाज और राजनीति के साथ साथ वहां

के साहित्य, कला और संस्कृति पर लगातार नजर रखती हैं और उन्होंने एशियाई महाद्वीप के देशों के साहित्य का अनुवाद हिंदी में करने की चुनौती को बखूबी निभाया और हिंदी साहित्य में पहली बार यह प्रयोग करने का श्रेय उन्हें जाता है। 'अदब की बाईं पसली' शीर्षक से मध्यपूर्व एशियाई तथा पूर्वी मुल्कों के साहित्य की एक पूरी श्रृंखला के जरिए उन्होंने इन देशों के समाज की एक तस्वीर कागजों पर उतार दी है। उनका कहना है कि इन किताबों में लिखा एक एक हरफ उनकी रूह से निकला है और उन्होंने 35 वर्ष की मेहनत के बाद छह खंड में साहित्य का यह कीमती नजराना पेश किया है।

इसमें अपनी बात कहने के लिए उन्होंने अनुवाद, लेख, कहानी, निबंध और उपन्यास को अपना माध्यम बनाया है। जिंदगी और अदब में स्त्री और पुरूष को एक दूसरे का पूरक मानने वाली नासिरा शर्मा का कहना है कि उन्होंने मुस्लिम पृष्ठभूमि पर जो उपन्यास लिखे हैं उन पर हिंदू महिलाओं की प्रतिक्रिया जानने के बाद वह पूरे दावे से कह सकती हैं कि महिलाओं की समस्याओं को हिंदू या मुस्लिम के दायरे में बांधा नहीं जा सकता। वर्ष 2016 में उन्हें उनके उपन्याय ''पारिजात'' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से नवाजा गया था। उनके रचनाकर्म में 'सात नदियाँ एक समन्दर', 'शाल्मली', 'ठीकरे की मँगनी', 'जिन्दा मुहावरे', 'अक्षय वट', 'कुइयाँजान', 'जीरो रोड', 'अजनबी जजीरा' और 'कागज की नाव' प्रमुख रहे हैं। आज के दौर को उर्दू का सबसे हसीन दौर बताने वाली नासिरा शर्मा ने अपने ढेरों उपन्यास, कहानी संग्रह, लेख संकलन, अनुवाद, संपादन और रिपोर्ताज संग्रह के जरिए हिंदी के पाठकों को साहित्य की पूंजी से मालामाल कर दिया है और उम्मीद है कि उनकी कलम से आगे भी इसी तरह के और मोती झरते रहेंगे।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि नासिरा शर्मा का औपन्यासिक साहित्य राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय परिदृष्य को अपने में समाहित किये हुए है। भू–मण्डलीकरण की जिस प्रवृत्ति ने विश्व को एक सूत्र में बांध दिया वह प्रवृत्ति नासिरा षर्मा के साहित्य में स्वतः उदघाटित हो उठती है जिसके माध्यम से लेखिका ने सम्पूर्ण विश्व की ज्वलंत समस्याओं को वाणी प्रदान की है। यही कारण है कि नासिरा शर्मा समसामयिक युग की पहचान बन सकी।